़मुद्री संसाधन

(सजीव एवं निर्जीव)

डॉ. सी. एल. गर्ग
एम. एस-सी., पी-एच. डी.
वैज्ञानिक—एफ (सेवा निवृत्त)
लेसर साइंस एण्ड टेक्नोलाजी सेन्टर
मेटकाफ हाउस, दिल्ली-110054

ो पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स

भूमिका

हमारे जीवन में महासागरों की प्रमुख भूमिका रही है। प्राचीनकाल से ही मानव समुद्री संसाधनों का प्रयोग करता रहा है। समुद्री संसाधनो को मुख्य रूप से दो वर्गों में बांटा जाता है। ये दो वर्ग हैं—सजीव संसाधन, और निर्जीव संसाधन। प्रस्तुत पुस्तक इन्हीं समुद्री संसाधनो के विषय में लिखी गई है।

समुद्री संसाधनों से सम्बन्धित इस पुस्तक को 16 अध्यायों में वर्गीकृत किया गया है। पहले दो अध्यायों में सागर संसाधनों और धरती के महासागरों और सागरों के विषय में जानकारी दी गई है।

अध्याय 3, 4 और 5 में सागरों के सजीव संसाधनों के विषय में प्रकाश डाला गया है। अध्याय 3 में समुद्री जीव-जन्तुओं पर, जो खाद्य पदार्थों के रूप में प्रयोग होते हैं, प्रकाश डाला गया है। अध्याय 4 और 5 में समुद्री वनस्पतियों के विषय में जानकारी दी गई है। अध्याय 4 वनस्पतियों के विषय में तथा अध्याय 5 उन वनस्पतियो के विषय में है जो औषधि निर्माण में प्रयोग होती हैं। अध्याय 6 से लेकर 12 तक निर्जीव समुद्री संसाधनों पर प्रकाश डाला गया है। छठे अध्याय में समुद्री खनिज संपदा के विषय में जानकारी दी गई है। अध्याय 7 समुद्रों से नमक प्राप्त करने के तरीकों को बताता है। अध्याय 8 सागरों से पैट्रोलियम और गैस संसाधनों की जानकारी प्रस्तुत करता है। अध्याय 9 समुद्री रेडियोधर्मी पदार्थों की जानकारी देता है। अध्याय 10, 11 और 12 में समुद्री पानी को पीने योग्य

विषय-सूची

अध्याय 1

सागर संसाधन—एक परिचय

सागर संसाधनों का अर्थ है सागरों से प्राप्त होने वाले मानवोपयोगी पदार्थ। ये पदार्थ समुद्री जीव-जन्तु, वनस्पति और निर्जीव पदार्थ कुछ भी हो सकते हैं।

धरती के महासागर और सागर अनेक सजीव एवम् निर्जीव संसाधनों का विशाल भंडार हैं। वास्तव में जीवन की उत्पत्ति भी सागरों से मानी जाती है। प्राचीन काल से ही मानव सागरों से प्राप्त उत्पादों को किसी न किसी रूप में प्रयोग करता आ रहा है। समुद्री संसाधनो की अपार संख्या है। इस अध्याय में हम समुद्री संसाधनों के विषय में संक्षेप में जानकारी प्रस्तुत कर रहे हैं।

सागर जीव-जन्तुओं और वनस्पति के विशाल भंडार हैं। सागर से मछलियों के रूप में मानव को भोजन प्राप्त होता है। प्रतिवर्ष विश्व में करोड़ों टन मछली, शैल, ह्वेल मछली आदि सागरों से पकड़ी जाती है। मानव की लगभग 10 प्रतिशत प्रोटीन आवश्यकतायें इन्हीं से पूरी होती हैं। उत्तरी सागर, न्यूफाउन्डलैण्ड के पास अंध महासागर तथा बेरिना सागर मछली पकड़ने के विशेष क्षेत्र हैं। विश्व के लगभग सभी देशों में मछलियों को भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है।

अटलांटिक महासागर से क्लेम्स, लोबस्टर और ओयस्टर भी प्राप्त किये जाते हैं। टुना नामक मछली जिसे लोग बड़े चाव से खाते हैं, प्रशान्त महासागर और अंध महासागर से भारी मात्रा में प्राप्त की जाती हैं। जिन क्षेत्रों से टुना पकड़ी जाती है उनसे ह्वेल भी पकड़ी

जाती थी लेकिन ह्वेल के विलुप्त होने के डर से इसे पकड़ने पर सभी देशों ने प्रतिबन्ध लगा दिया है। अब इसे केवल वैज्ञानिक कार्यों के लिए पकड़ा जाता है।

सागरों में फाइटोप्लान्कटनों की भरमार है। इनमें डाइटम, कोकोलिथोफोर आदि आते हैं। ये समुद्री जीवों के लिए चारागाह का काम करते हैं। समुद्री जीवों का ये विशेष भोजन है। समुद्रों की ऊपरी सतह के पेड़-पौधों को सूरज के प्रकाश से ऊर्जा प्राप्त होती है। सौर ऊर्जा समुद्र की कुछ गहराई तक जा सकती है।

मछलियों को दबाकर उनका तेल निकाला जाता है जो विटामिनों का एक विशेष स्रोत है। यह तेल रासायनिक उद्योगों में भी प्रयोग किया जाता है।

समुद्रों में अनेक प्रकार के खनिज और लवण मिलते हैं। सागरों के पानी से खाने का नमक प्राप्त किया जाता है। सागरों से सोडियम और मैगनीशियम क्लोराइड, कैल्शियम कार्बोनेट और कैल्शियम सल्फेट आदि लवणों के रूप में प्राप्त किये जाते हैं। समुद्रों से प्राप्त नमक केवल हमारे खाने के रूप में ही प्रयोग नहीं होता बल्कि जीव परीक्षण और बर्फ बनाने में भी भारी मात्रा में प्रयोग किया जाता है। नमक को दूसरे रसायनों के निर्माण में भी प्रयोग किया जाता है।

नमक के अतिरिक्त महासागरों से मैगनीशियम ब्रोमाइड प्राप्त होता है जो ब्रोमीन तथा फोटो फिल्म बनाने में प्रयोग होता है। महासागरों से पोटाशियम, कैल्शियम, सल्फर आदि के अनेक लवण प्राप्त होते हैं। सागरों से मिलने वाले लवणों और खनिजों का विवरण एक अलग अध्याय 'खनिज सम्पदा' में प्रस्तुत किया गया है।

सागरों से पैट्रोलियम, कच्चा तेल और प्राकृतिक गैस भी भारी मात्रा में प्राप्त की जाती है। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद कच्चा तेल महासागरों से भारी मात्रा में प्राप्त किया गया है। पैट्रोलियम उत्पादन मे खाड़ी क्षेत्र सबसे आगे है। यहां से लगभग तेल के कुल उत्पादन का 75% भाग प्राप्त किया जाता है। अकेले अमेरिका में प्रतिवर्ष लगभग 2500 लाख बैरल तेल सागरों से प्राप्त किया जाता है।

गांठों के रूप में महासागरों की तलहटी से मैगनीज नौड्यूल्स

प्राप्त होते हैं। सागरों से निकल, कोबाल्ट और तांबे के नौड्यूल्स भी प्राप्त किये जाते हैं। समुद्रों की तली से सोना, क्वार्ट्ज, निकल और लोहे जैसे पदार्थ भी प्राप्त किये जाते हैं।

सच्चे और मूल्यवान मोती समुद्री जीव ओयस्टर से प्राप्त होते हैं। ऐसे मोती मानव सदियों से प्राप्त करता आया है। आज भी जापान जैसा देश ओयस्टर से कृत्रिम मोती बना रहा है। सच्चे मोती आज भी सागरों से ही प्राप्त होते हैं।

प्रशान्त महासागर में पेरू के पास पाये जाने वाले पक्षियों की बीटों से एक बहुत अच्छी किस्म की खाद बनाई जाती है। इस खाद का नाम गुआनो है। इसे संसार के सभी देशों में प्रयोग किया जाता है।

समुद्री घास या सी वीड को भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसी घास से आयोडीन, सोडा और पोटाशियम जैसे पदार्थ बनाये जाते हैं। समुद्री घास को औषधियां बनाने, आइसक्रीम कैन्डी, जैली सलाद, शृंगार प्रसाधन आदि के निर्माण में ऊंचे पैमाने पर प्रयोग किया जाता है।

समुद्र की तलहटी से आज का मानव स्पंज एकत्रित करने में सक्षम है। स्पंज की बाहरी सतह पर अनेक छेद होते हैं। पानी इन छेदों से होकर अन्दर जाता है। स्पंज में पानी को रोके रखने का गुण होता है। छोटे स्पंज शल्य चिकित्सा और स्नानघरों में काम आते हैं। बड़े स्पंज गद्दे बनाने के काम आते हैं।

आज के मानव ने ऐसे तरीके विकसित कर लिए हैं जिनके द्वारा समुद्र के खारे पानी को पीने योग्य बनाकर प्रयोग किया जा रहा है। न्यूक्लियर रिएक्टरों के लिए गुरु जल (Heavy water) सागरों से ही प्राप्त किया जा रहा है।

धरती के महासागर ऊर्जा का विशाल स्रोत हैं। सागर में उपस्थित ड्यूटेरियम को फ्यूजन क्रियाओं में प्रयोग करके अपार ऊर्जा पैदा की जा सकती है। सागरों में ड्यूटेरियम के अपार भंडार हैं। सागर-तरंगों की ऊर्जा को मानव अपने उपयोगों में प्रयोग कर रहा है। ज्वारीय ऊर्जा से चलने वाला प्रथम विद्युत संयंत्र प्रतिवर्ष 544 मैगा किलोवाट

आवर ऊर्जा पैदा करता है। आज कई दूसरे देश भी ज्वारीय ऊर्जा चालित संयंत्र विकसित करने में लगे हैं।

वर्षा जिससे हमें जीवन मिलता है, हमारी फसलें पैदा होती हैं, वह सब सागरों के कारण ही होती है। सूरज की गर्मी से झीलों, नदियों और सागरों का पानी धीरे-धीरे वाष्पित होकर बादलों का निर्माण करता है। इन्हीं बादलों से वर्षा होती है। इस प्रकार सागर वर्षा का विशाल स्रोत हैं।

सागरों को मानव मनोरंजन के लिए प्रयोग कर रहा है। आज सागरों को खेलों के लिए भी प्रयोग किया जा रहा है। तैरना और समुद्री लहरों पर सर्फिन्ग करना एक मनोरंजक खेल है। इस प्रकार हम देखते हैं कि महासागर सजीव और निर्जीव संसाधनों के विशाल भंडार हैं। इस पुस्तक के अलग-अलग अध्यायों में भिन्न-भिन्न संसाधनों का विवरण दिया गया है।

अध्याय 2

धरती के महासागर और सागर

देखने में लगता है कि पृथ्वी पर भूमि अधिक है और पानी कम लेकिन वैज्ञानिक आंकड़ों के अनुसार धरती का 71 प्रतिशत भाग जल से ढका हुआ है और शेष 29 प्रतिशत भाग भूमि है। मोटे शब्दों में पृथ्वी का तीन चौथाई भाग जल मग्न है और एक चौथाई भाग जमीन है। पृथ्वी पर जितना जल है उसका लगभग 97% भाग महासागरों और सागरों से आच्छादित है। जल का वितरण दोनों गोलार्द्धों में एक जैसा नहीं है। उत्तरी गोलार्द्ध में 61 प्रतिशत और दक्षिणी गोलार्द्ध में 81 प्रतिशत है।

धरती की सतह के विशाल जल से ढके क्षेत्रों को महासागर कहते हैं। यदि सच्चाई से देखा जाये तो समस्त पृथ्वी को विशाल महासागर की उपमा दे सकते हैं जिस पर यहां-वहां महाद्वीप और टापू हैं। महासागरों का क्षेत्रफल इतना विशाल है कि इसे पार करने में भूमि के बिना दर्शन किये कई दिन का समय लगता है। कुछ जगह महासागरों की गहराई 10 किलोमीटर से भी अधिक है। उड़ते हुए हवाई जहाज या हैलीकॉप्टर से महासागरों का पानी देखने में शांत लगता है लेकिन सागरों का पानी शांत नहीं है बल्कि पानी में ऊंची-ऊंची तरंगें उठती और गिरती रहती हैं।

महासागरों में तरह-तरह के अनेक जीव और पौधे हैं, इनमें से कुछ जीव और पौधे बहुत छोटे हैं लेकिन बहुत से अत्यंत विशाल हैं। धरती के महासागर रहस्य के बहुत बड़े पिटारे हैं। महासागरों

.हस्यों को समझने के लिए अनेक प्रयास चल रहे हैं।
प्रचलित विचारधारा के अनुसार कुछ विशेषज्ञ महासाग
ा चार मानते हैं लेकिन कुछ विशेषज्ञ इनकी संख्या पां.
हम यहां पर पांच महासागरों का संक्षेप में विवरण देंगे।
पांच महासागर हैं–

(1) प्रशान्त या पैसेफिक महासागर
(2) अन्ध या अटलांटिक महासागर
(3) हिन्द या इंडियन महासागर
(4) आर्कटिक महासागर और
(5) अंटार्कटिका महासागर

कुछ विशेषज्ञ आर्कटिक महासागर को अटलांटिक महासा
मानते हैं तथा अटलांटिक महासागर की सीमाएं न होने के
अलग से महासागर नहीं मानते हैं।

सभी महासागरों का कुल क्षेत्रफल 3620 लाख वर्ग कि
तथा धरती की जमीन का कुल क्षेत्रफल 1480 लाख वर्ग कि
महासागरों की औसत गहराई 3800 मीटर है जबकि जमी
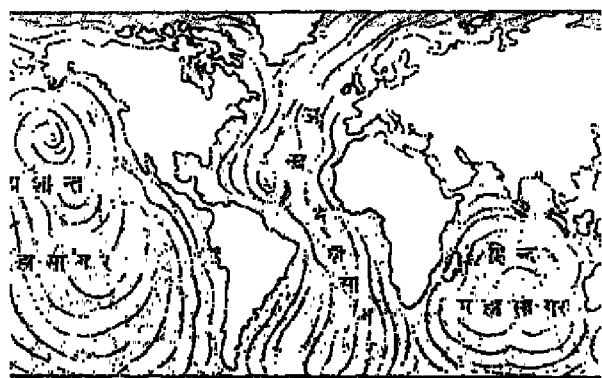
चित्र 2.1 : धरती के महासागर

त ऊंचाई 840 मीटर है। धरती के महासागरों में दूसरे
डियां तथा जल संयोजी शामिल हैं। ये भी एक-दूसरे से ज
उदाहरण के लिए भूमध्य सागर और काला सागर अट
सागर के भाग हैं। महासागरों में रहने योग्य स्थान धरती की

में 300 गुना अधिक है। सागरों में ऊपरी सतह से लेकर विशाल गहराइयों तक जीव-जन्तु पाए जाते हैं। चित्र 2.1 में धरती के महासागर दिखाए गए हैं।

1. प्रशान्त महासागर

प्रशान्त महासागर आकार में सबसे बड़ा और गहरा महासागर है। यह धरती का 35.25 प्रतिशत क्षेत्रफल घेरे हुए है। आसपास के सागरों को मिलाकर इसका कुल क्षेत्रफल 1650 लाख वर्ग किलोमीटर है। उत्तर दिशा में बैरिन के मोहाने से लेकर अंटार्कटिका तक के बीच की दूरी 15500 किलोमीटर है। पनामा और थाईलैंड के बीच इसकी सबसे अधिक चौड़ाई 17500 किलोमीटर है। यह इतना बड़ा महासागर है कि इसमें धरती के सभी महाद्वीपों को रखने के बाद भी इतना स्थान बच सकता है जिसमें एशिया महाद्वीप को रखा जा सकता है।

प्रशान्त महासागर की गहराई भी सबसे अधिक है। गुआम के दक्षिण-पश्चिम में नैरिनाज़ ट्रैन्च नामक स्थान पर प्रशान्त महासागर की अधिकतम गहराई 11055 मीटर है। हम जानते हैं कि धरती का सबसे ऊंचा पर्वत एवरेस्ट है जिसकी ऊंचाई 8848 मीटर है। यदि हम इस पर्वत को प्रशान्त महासागर में डुबा दें तो भी यह इसके पानी में लगभग एक मील गहराई तक डूबा रहेगा। इस महासागर में हजारों टापू कोरलरीफ और ज्वालामुखी हैं।

यदि हम पृथ्वी के ग्लोब पर नजर डालें तो इस महासागर के पूर्व में उत्तरी अमरीका और दक्षिणी अमरीका हैं तथा पश्चिम में एशिया और आस्ट्रेलिया हैं।

पैसेफिक शब्द का अर्थ है शांत होना। वैसे तो यह महासागर शांत है लेकिन कहीं-कहीं यह इतना अशांत है कि इसमें तूफान आते हैं। तलहटी में ज्वालामुखी फटते हैं तथा बहुत सारे भूकंप आते हैं।

प्रशान्त महासागर में लाखों प्रकार के सूक्ष्म पौधे और विशाल जीव-जन्तु हैं। डॉलफिन, सील, ह्वेल, सैलफिश, समुद्री घास आदि कुछ उदाहरण हैं। इस महासागर में इतनी मछलियां हैं कि इसमें से प्रतिवर्ष

सारे ससार की 49 प्रतिशत मछलिया पकडी जाती है इन मछलियों को भोजन के रूप में खाया जाता है।

2. अटलांटिक महासागर

बड़े महासागरों में इस महासागर का दूसरा स्थान है। आसपास के सागरों को मिलाकर इसका क्षेत्रफल 1060 लाख वर्ग किलोमीटर है। यदि आसपास के सागरों को छोड़ दिया जाए तो इसका क्षेत्रफल 824 लाख वर्ग किलोमीटर बैठेगा। यह महासागर सारी पृथ्वी का 20.9 प्रतिशत भाग घेरता है। इसकी सबसे अधिक गहराई प्युर्टोरिको ट्रेंच नामक स्थान पर है जो 8381 मीटर है। इसकी औसत गहराई 4270 मीटर है।

विश्व के अधिकांश औद्योगिक देश इस महासागर के किनारे बसे हैं। यह व्यापार की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण महासागर है। रोम के लोगों ने एटलस पर्वतमाला के नाम पर इस महासागर का नाम अटलांटिक महासागर रखा था।

इस महासागर का सबसे चौड़ा भाग फ्लोरिडा और स्पेन के बीच है जो 6679 किलोमीटर है। ग्रीनलैंड और नार्वे के बीच इसकी चौड़ाई केवल 1500 किलोमीटर है।

इस महासागर के पूर्व में यूरोप और अफ्रीका हैं तथा पश्चिम में उत्तरी अमरीका और दक्षिणी अमरीका हैं। उत्तर में यह महासागर आर्कटिक महासागर से मिलता है।

उत्तरी अटलांटिक महासागर में बड़े-बड़े तूफान आते हैं लेकिन इसमें कुछ क्षेत्र बिल्कुल शांत भी हैं। इस महासागर में मछलियों और दूसरे समुद्री जीवों की भरमार है। हर वर्ष इस महासागर से संसार की 33 प्रतिशत मछलियां पकड़ी जाती हैं। इस महासागर में खनिज, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के भंडार हैं।

3. हिन्द महासागर

विशालता में हिन्द महासागर का तीसरा स्थान है। आसपास के समुद्रों को मिलाकर हिन्द महासागर का क्षेत्रफल 750 लाख वर्ग

किलोमीटर है. बिना इन सागरो को मिलाए इसका क्षेत्रफल 734 लाख वर्ग किलोमीटर है। यह महासागर केप कैमरिन से लेकर दक्षिणी ध्रुव के अंटार्कटिका तक फैला हुआ है।

पश्चिम में यह अफ्रीका से लेकर पूर्व में आस्ट्रेलिया और इंडोनेशिया तक फैला है। यह समस्त धरती का 14.65 प्रतिशत स्थान घेरता है। इस महासागर की सबसे अधिक गहराई डाइमेरिना नामक स्थान पर है जो लगभग 8047 मीटर है। इस महासागर की औसत गहराई 3960 मीटर है। अफ्रीका और आस्ट्रेलिया के बीच इसकी चौड़ाई 9980 किलोमीटर है। भारत और श्रीलंका इसे अरब सागर और बंगाल की खाड़ी में बांटते हैं। इस महासागर के चारों ओर मन्द हवाएं बहती हैं। लेकिन कभी-कभी इस महासागर में विशाल तूफान भी आते हैं। इन तूफानों से जनसंपत्ति की हानि होती है और बहुत से लोग मर जाते हैं।

इस महासागर में प्रशान्त महासागर और अंध महासागर की तुलना में मछली पकड़ने का धंधा कम होता है। इसमें प्रतिवर्ष संसार की 5 प्रतिशत मछलियां पकड़ी जाती हैं। ऐसा माना जाता है कि इस महासागर से हर साल 4000 लाख मीट्रिक टन मछलियां पकड़ी जाती हैं। मछली पकड़ने का व्यवसाय मुख्यतः भारत के पश्चिमी किनारों पर होता है। हिन्द महासागर में जून-जुलाई और अगस्त के महीने में ऊंची-ऊंची तरंगें उठती हैं। इन महीनों में इस महासागर में मछली पकड़ने का काम लगभग बंद हो जाता है।

4. आर्कटिक महासागर

यह एक प्रकार से महासागर नहीं है क्योंकि इसमें जलयान वगैरह नहीं चलते हैं। यह धरती के उत्तरी किनारे पर है जो एशिया, यूरोप और उत्तरी अमरीका के उत्तर में है। यह उत्तरी ध्रुव को चारों ओर से घेरे हुए है और जाड़े के मौसम में यह पूरी तरह बर्फ से ढक जाता है। साल के दूसरे महीनों में इस महासागर की बर्फ पिघलती रहती है।

इस महासागर का क्षेत्रफल 140 लाख वर्ग किलोमीटर है इसकी सबसे अधिक गहराई 5441 मीटर है और औसत गहराई 1330 मीटर है। इस महासागर का जो स्थान सबसे गहरा है उसका कोई नाम नहीं रखा गया है।

5. अंटार्कटिका महासागर

यह महासागर दक्षिण ध्रुव के पास आता है। इसकी कोई सीमा नहीं है। इसीलिए बहुत से विशेषज्ञ इसे महासागर नहीं मानते हैं। कुछ वर्षो से अंटार्कटिका में बहुत से अनुसंधान किए गए हैं। इसकी संपदा के कारण इसका महत्व बहुत बढ़ गया है। कुछ भूगोल विशेषज्ञ इसे प्रशान्त महासागर, अटलांटिक महासागर और हिन्द महासागर का भाग मानते हैं। चित्र 2.2 में पृथ्वी के भूभाग और जलभाग दिखाए गए हैं।
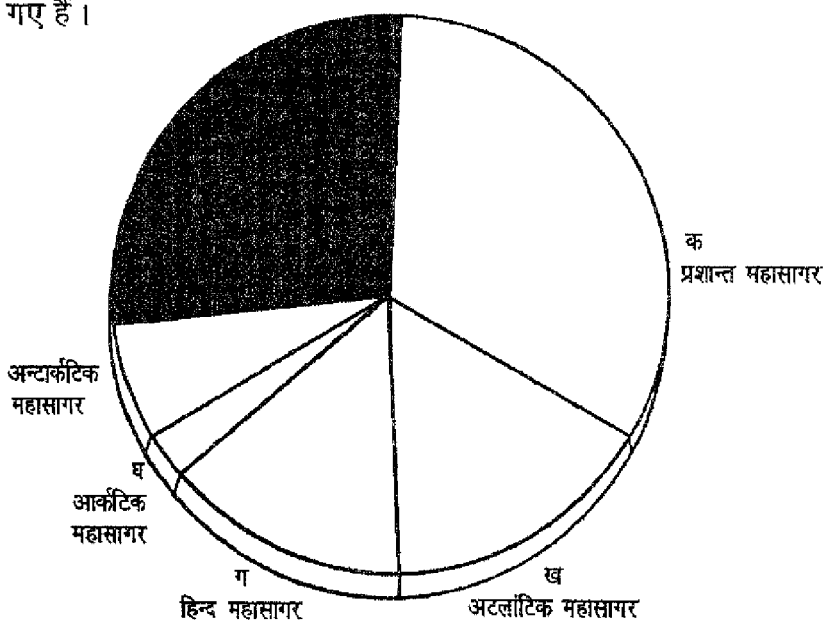
चित्र 2.2 : धरती के भूभाग और जलभाग

विश्व के तीन महासागर (प्रशान्त महासागर, अटलांटिक महासागर और हिन्द महासागर) को भूमध्य रेखा के साथ-साथ उत्तरी और दक्षिणी

र्द्र मे छ हिस्सो मे बाटा गया है यह भाग है उत्तरी प्रशान्त
ागर और दक्षिणी प्रशान्त महासागर, उत्तरी अटलांटिक महासागर
दक्षिणी अटलांटिक महासागर, उत्तरी हिन्द महासागर और दक्षिणी
महासागर।

पृथ्वी के सागर

महासागरों के अतिरिक्त धरती के दस प्रमुख सागर हैं। इनके
और क्षेत्रफल तालिका 2.1 में दिए गए हैं।

तालिका 2.1

संख्या	नाम	क्षेत्रफल
1.	दक्षिण चीन सागर	2,975,000 वर्ग किलोमीटर
2.	कैरिबियन सागर	2,753,000 वर्ग किलोमीटर
3.	भूमध्य सागर	2,505,000 वर्ग किलोमीटर
4.	बेरिन्ग सागर	2,269,000 वर्ग किलोमीटर
5.	मैक्सिको की खाड़ी	1,544,000 वर्ग किलोमीटर
6.	ओरवोत्सक सागर	1,528,000 वर्ग किलोमीटर
7.	पूर्वी चीन सागर	1,249,000 वर्ग किलोमीटर
8.	हड्सन की खाड़ी	1,232,000 वर्ग किलोमीटर
9.	जापान का सागर	1,008,000 वर्ग किलोमीटर
10.	अन्डमान सागर	798,000 वर्ग किलोमीटर

इन दस सागरों को विश्व के मानचित्र में चित्र 2.3 में दिखाया
है। इन दस सागरों के अतिरिक्त उत्तरी सागर, काला सागर,
सागर, बाल्टिक सागर, फारस की खाड़ी, सेंट लोरेन्स की खाड़ी,
ायन सागर भी बड़े सागरों की श्रेणी में आते हैं।

10 6
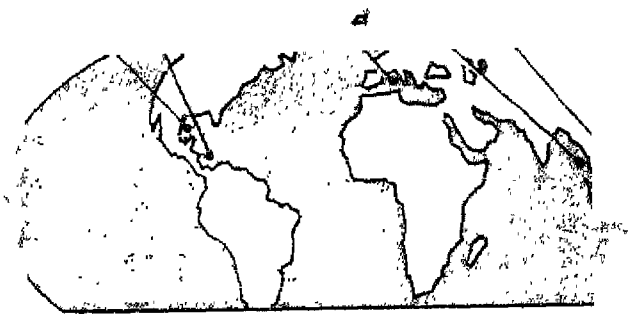
चित्र 2.3 : दस प्रमुख सागर

मानव जीवन का सागरों से विशेष संबंध रहा है।
है कि महासागरों और सागरों से मानव को उसके उपयो
वस्तुएं प्राप्त होती हैं। यही कारण है कि सागरों से प्र
के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए सागर विज्ञान उ
विषय बन गया है। इस पुस्तक के अगले अध्यायों में स
की अलग-अलग जानकारी दी गई है।

अध्याय 3

समुद्री जीव-जन्तु

सागरों में अनगिनत जीवधारी हैं। ये जीवधारी मानव के लिए भोजन का काम करते हैं। समुद्रों में अनेक प्रकार की मछलियां है जिन्हें हम भोजन के रूप में खाते हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि सागरों के सभी स्थानों पर मछलियों की संख्या एक जैसी नहीं होती। जैसे हमारी धरती कहीं बंजर है और कहीं बहुत उपजाऊ है इसी प्रकार सागर के बहुत से क्षेत्रों में मछलियों और दूसरे जीव-जन्तुओं की भारी संख्या है और कहीं इनकी संख्या बहुत ही कम है।

आर्थिक दृष्टि से मछली पकड़ना एक बहुत ही महत्वपूर्ण धंधा है। मछली पकड़ने से लाखों लोगों को काम मिलता है और अनगिनत लोगों को भोजन मिलता है। खाद्य संपदा के रूप में समुद्री जीवों में मछली, शैलफिश और स्तनपायी जीवों का विशेष महत्व है। इन जीवों को मनुष्य भोजन के रूप में और औद्योगिक कार्यो में प्रयोग करता है।

मछलियों से हमें प्रोटीन प्राप्त होते हैं। मानव की दस प्रतिशत प्रोटीन आवश्यकताएं समुद्र से पूरी हो रही हैं। प्रोटीन से शारीरिक वृद्धि होती है। इसलिए मानव के लिए प्रोटीन बहुत आवश्यक है।

जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ी है वैसे-वैसे मानव की भोजन की आवश्यकताएं भी बढ़ी हैं। अधिकांश मछलियां मानव भोजन के रूप में प्रयोग करता है लेकिन कुछ मछलियां जहरीली भी होती हैं। जहरीली

मछलियों को खाना स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक होता है विष ग्रंथियों वाली मछलियों में कैटफिश वीवरफिश स्कॉर्वियन फिश टोडफिश और सर्जन आम मछलिया हैं।

जैसे-जैसे जनसंख्या बढ़ी है और भोजन की मांग बढ़ी है मत्स्य उद्योग में क्रांतिकारी वृद्धि हुई है। आज के औद्योगिक युग में ताजा, डिब्बाबंद तथा जमे हुए कई रूपों में मछलियों को बेचा जाता है। मछलियों से केवल मानव को भोजन ही नहीं मिलता बल्कि जानवरों को चारा भी मिलता है। उद्योगों में मछलियों का तेल भी प्रयोग किया जाता है।

सागर में मछलियों के विशाल भंडार हैं। भोजन के लिए कई प्रकार की मछलियां पकड़ी जाती हैं। इनमें मुख्य रूप से एनकोवीज, केपलिन, मेकेरन, सार्डीनिस, टुना, कौंड़, पौलेक, कार्प आदि हैं। ह्वेल को भी भोजन के रूप में खाया जाता है लेकिन ह्वेल मछली नहीं है बल्कि स्तनपायी जीव है। यह बच्चे पैदा करती है और बच्चों को दूध पिलाती है। इसका एक-एक बच्चा हाथी के बराबर होता है। चित्र 3.1 में समुद्र से पकड़ी जाने वाली कुछ मछलियां दिखाई गई हैं। आज दुनिया में करोड़ों मीट्रिक टन मछलियां प्रतिवर्ष पकड़ी जाती हैं।
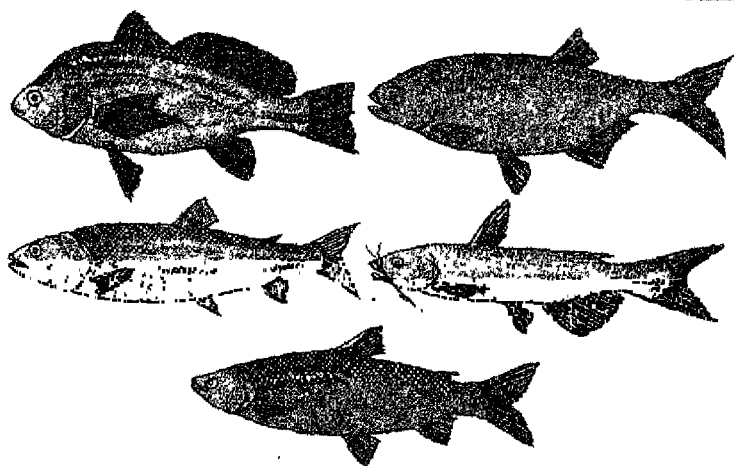
चित्र 3.1 : समुद्र से पकड़ी जाने वाली कुछ मछलियां

सागरों में मिलने वाली मछलियां कई प्रकार की होती हैं। कुछ मछलियां उड़ान भर सकती हैं। इन्हें फ्लाइंग फिश (Flying Fish) कहते हैं। यह ग्लाइडर की तरह उड़ान भर सकती हैं। चित्र 3.2 में एक फ्लाइंग फिश दिखाई गई है। कुछ मछलियां एक प्रकार का प्रकाश पैदा करती हैं। प्रकाश पैदा करने वाली मछलियों में मुख्य रूप से जैलीफिश, एंगलर फिश आदि आती हैं। चित्र 3.3 में प्रकाश पैदा करने वाली मछली दिखाई गयी है।
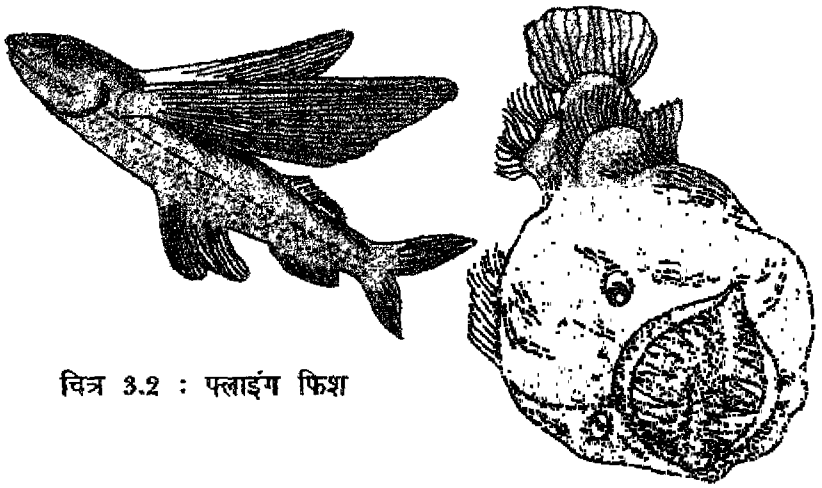
चित्र 3.2 : फ्लाइंग फिश

चित्र 3.3 : प्रकाश पैदा करने वाली एंगलर फिश

कुछ मछलियां बिजली पैदा करती हैं। इन मछलियों को विद्युत पैदा करने वाली मछली कहते हैं। ईल, विद्युत-रे, कैटफिश आदि बिजली पैदा करने वाली मछलियां हैं। चित्र 3.4 में यह मछलियां दिखाई गई हैं।

जापान, पेरू, रूस, अमरीका, चीन, नार्वे और चिली मछली पकड़ने के क्षेत्र में सबसे आगे हैं। स्पेन, भारत, कनाडा और आयरलैंड में लगभग विश्व की 3 प्रतिशत मछलियां पकड़ी जाती हैं। मत्स्य उद्योग मे संसार के एक करोड़ लोगों से भी अधिक कार्यरत हैं। ये खासतौर से समुद्री किनारों पर रहते हैं जहां मछलियों की संख्या बहुत अधिक होती है।
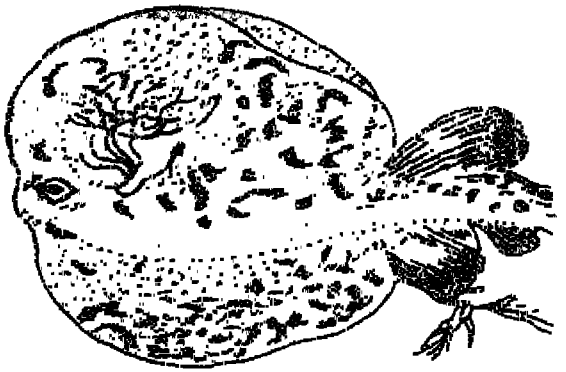
चित्र 3.4 : विद्युत-रे

मछली पकड़ने के लिए कांटा, हुक, स्पीयर, जाल
का प्रयोग बहुत लम्बे समय से होता आ रहा है। आज
पकड़ने के लिए मोटरबोट, जलपोत और विशाल आकार के
मे लाए जाते हैं।

विश्व के सभी सागरों के किनारों पर मछुआरों व
बस्तियां हैं जो अपने लिए तथा बेचने के लिए मछलिया
और अपना जीवन निर्वाह करते हैं। मछलियों को उचित रूप
करने और पैक करने के लिए बड़े-बड़े कारखाने हैं। इ
में मछलियों को सड़ने से बचाने के लिए बहुत से तरीके
जाते हैं। इन कारखानों में मछलियों को पैक करके दूसरे दे
के लिए भेजा जाता है।

सागरों में ओयस्टर, क्लेनस, लोवस्टर, स्क्विड, श्रिम्प
भी भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है। विश्व के ब
मे इन जन्तुओं को बड़े चाव से खाया जाता है। ह्वेल, डॉल
समुद्री गाय आदि व्यापारिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं।
से ही मानव इन समुद्री जीवों का बेरहमी से शिकार कर
है। इसकी वजह से ह्वेल आज विलुप्तता के कगार पर जा
इसीलिए इनके शिकार पर हमारे देश में प्रतिबंध लगा दि

ससार मे विलुप्तता के डर से बहुत से जीवो के शिकार पर प्रतिबध लगा दिया गया है। ससार की बहुत-सी सस्थाए समुद्री जीव सरक्षण पर कार्य कर रही हैं।

भोजन के अतिरिक्त और भी अनेक जीव रूप में समुद्री संसाधन है जिनका मानव प्रयोग करता आ रहा है। समुद्री स्पंज एक उदाहरण है जिसमें पानी सोखने का गुण होता है। यदि स्पंज को दबाकर छोडा जाए तो यह अपनी मूल अवस्था में आ जाता है। स्पंज को बाथरूम में प्रयोग किया जाता है और इससे गद्दे भी बनाए जाते हैं।

स्पंज को साफ करके इसकी खाल उतारते हैं फिर इसे वायु में रखकर मारते हैं और धोते हैं। इसके बाद इसे सुखाते हैं। सूखे पदार्थ को बाजार में बेचा जाता है।

मूंगा भी एक समुद्री जीव है और यह समुद्री द्वीपों में पाया जाता है। अंग्रेजी भाषा में इसे कोरल कहते हैं। समुद्रों में ये उद्यान के रूप में दिखाई देते हैं। इनका रंग नारंगी, हरा, गुलाबी, सफेद, बैंगनी, पीला आदि होता है। प्राचीन साहित्य में मूंगे को औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता था। चीन, जापान और मलय द्वीप में काले मूंगे से बने कड़े, कंठहार आदि बनाकर बड़े चाव से पहने जाते हैं। हमारे देश में मूंगे का उपयोग गठिया के उपचार में किया जाता है।

समुद्री प्लवकों को मानव भोजन के रूप में प्रयोग करता आ रहा है। प्लवकों में प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। इसीलिए प्लवकीय जीवों का प्रयोग भोजन के रूप में काफी बढ़ गया है। कॉपीपोड में 70 से 77 प्रतिशत प्रोटीन होता है। जापानी लोग जैलीफिश को सूप बनाकर पीने के लिए प्रयोग करते हैं। ऐसा देखा गया है कि जहाज दुर्घटना में लोग प्राणि प्लवक खाकर जीवित रहे हैं।

अभी हमने ऐसी मछलियों का जिक्र किया था जो प्रकाश पैदा करती हैं। ये मछलियां समुद्री वातावरण में आसपास के स्थान को रोशनी देती हैं जिससे ये अपने शिकार को रोशन करती हैं। भविष्य में यह संभव है कि यदि इन मछलियों की प्रकाश क्षमता का हम रहस्य मालूम कर सकें तो ऊर्जा संसाधनों का कुछ बेहतर उपयोग कर सकेंगे।

ओयस्टर एक समुद्री जीव है जिससे मोती प्राप्त हो
का व्यापारिक रूप में बहुत बड़ा उपयोग है। आभूषणों
उपयोग बहुत अधिक होता है। आमतौर पर मोती का
चमकदार होता है। कुछ मोती गुलाबी, लाल और काले
मोती का मूल्य इसकी आकृति, आकार और रंग पर निर्भ
हमारे देश में मोती की मालाएं बड़े चाव से पहनी जा
अंगूठियों में भी पहना जाता है। जापान में नकली मोती,
कहते हैं, पैदा किए जाते हैं। कल्चर मोतियों को भी
रूप में प्रयोग किया जाता है।

कटल फिश भोजन के रूप में बड़े चाव से खाई जात
फिश का मांस विदेशी मंडियों में बहुत महंगा विकता है।
ऐसा भी था जब मछेरे कटल फिश के जाल में फंसने पर
ही समुद्र में फेंक देते थे लेकिन आजकल स्थिति बदल ग
इसे स्वादिष्ट भोज्य पदार्थ के रूप में खाया जाता है।
एक कटल फिश दिखाई गई है।
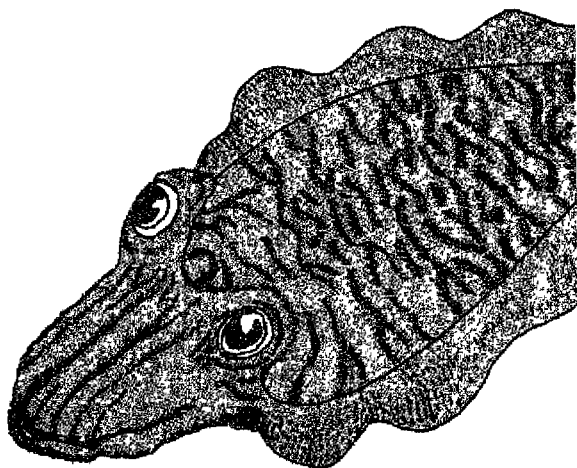
चित्र 3.5 : कटल फिश
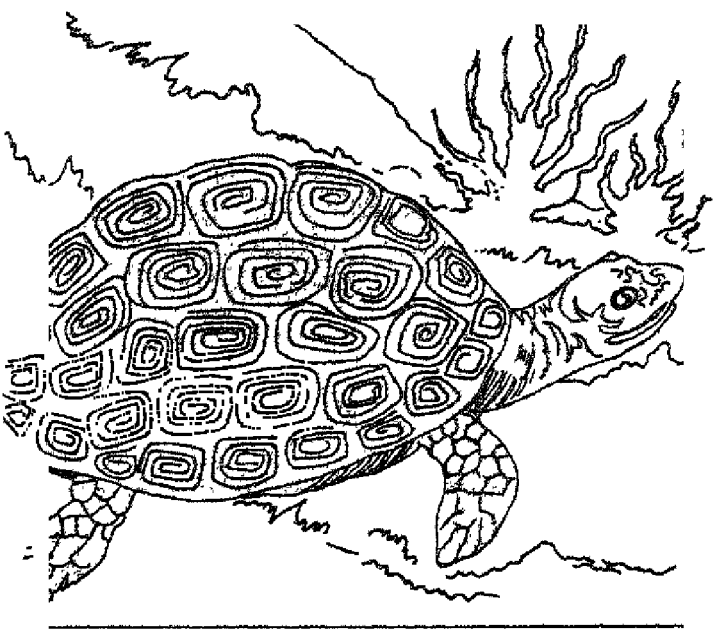
चित्र 3.6 : समुद्री कछुआ

द्री कछुआ भी एक जानामाना समुद्री जीव है। इन कछुओं
लाभदायक पदार्थ जैसे मांस, तेल, अंडे, खाल, खोल आदि
ते हैं। कछुए का तेल शृंगार प्रसाधन बनाने में काम आता
ए के उदर के पास के हरे भाग को कैलिपी कहते हैं। इसे
ने के लिए प्रयोग किया जाता है। कछुए का मांस भी मानव
। इसके अंडे भी बड़े चाव से खाए जाते हैं। कछुओं की
पवान होती है। कछुओं का खून भी बाजार में बिकता है।
में एक कछुआ दिखाया गया है। डॉलफिन भी मानव के
उपयोगी संसाधन है। डॉलफिन ध्वनि तरंगों की दूर से आती
ाज को समझ सकती है। यह हमें मछली पकड़ने में मदद
। समुद्री जीवों में डॉलफिन को सबसे अधिक समझदार माना
समुद्री दुर्घटनाओं में ग्रस्त डूबते व्यक्तियों को इसने बचाया
नुष्य की अच्छी दोस्त है और मनुष्य को अनेकों खेल दिखाती
नेकों को डॉलफिन प्रशिक्षण देती है और रक्षा संबंधी विभिन्न
काम आती है। चित्र 3.7 में एक डॉलफिन दिखाई गई है।
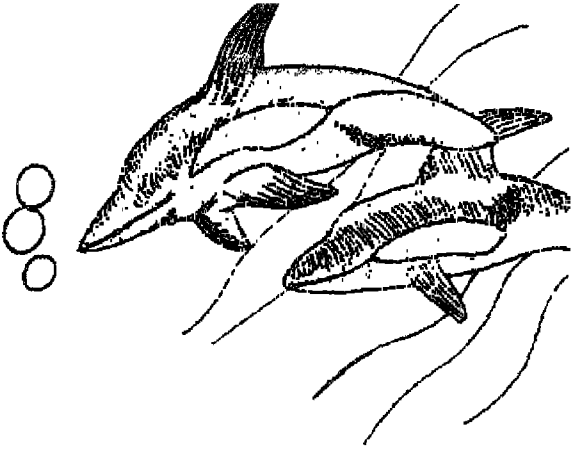
चित्र 3.7 : डॉलफिन

ह्वेल के भोजन के रूप में प्रयोग की बात हम इ
के आरम्भ में कर चुके हैं। ह्वेल से प्राप्त तेल से साबुन और
बनायी जाती हैं। इससे प्राप्त एक पदार्थ क्रीम बनाने के
है। इसे स्पर्मसेंटी कहते हैं। स्पर्म ह्वेल की आंत से ऐम्ब
होती है जो सुगंध बनाने के काम आती है। तेल के अल
हड्डियां, मांस, खाल और दांत भी बहुत उपयोगी हैं।
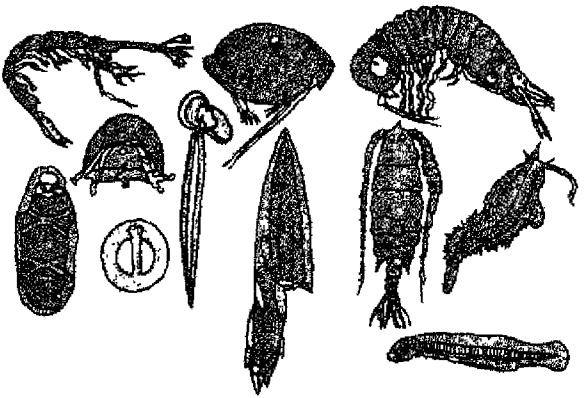
चित्र 3.8 : जूप्लान्कटन

टन भी महत्वपूर्ण समुद्री जीव हैं। इनमें कीपेपोड, जैलीफिश आदि आते हैं। इनमें से अधिकांश के शरीर हैं। इस वर्ग के कुछ जीव पानी में इसलिए रहते है रीर में लगभग पानी ही होता है या गैस के बुलबुले रे कुछ जीवों के शरीर में छोटे-छोटे फिन होते हैं जो करते हैं। चित्र 3.8 में कुछ जूप्लान्कटन दिखाए गए हैं। वर्ग में वे जीव आते हैं जो समुद्र की तली से लेकर पाए जाते हैं। सागर की तली में रहने वाले जीवों मे त्लेम्स, स्पंज, समुद्री लिली और स्वटोफश आते हैं। चित्र ज वर्ग के प्राणी दिखाए गए हैं।
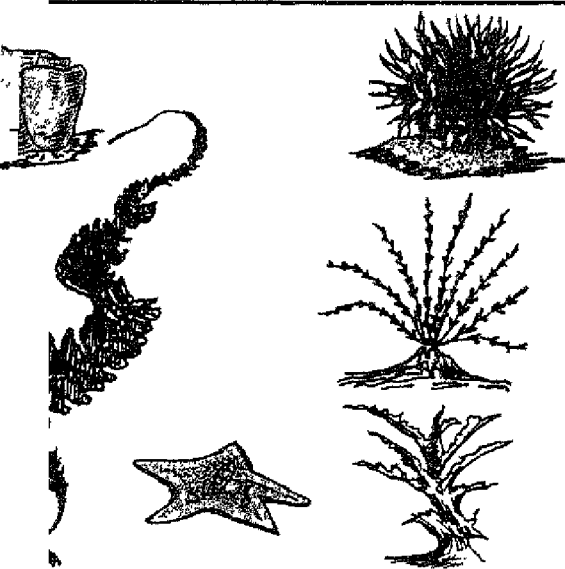
चित्र 3.9 : बैन्थोज

वच वाले क्रैब और लोबस्टर भी इसी वर्ग में आते हैं। छ प्राणी तैराक होते हैं और कुछ चलने में सक्षम होते जीवनभर समुद्र की तली में एक ही स्थान पर चिपके एनीमोन और कोरल (मूंगा) आते हैं। ये समुद्री जीव ए बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

भारत मे मत्स्य उद्योग

भारत में मछली पकड़ने की संख्या दूसरे देशों की तुलना में बहुत कम है। यह लगभग 3 प्रतिशत है। मछलियों का 75 प्रतिशत भाग तटवर्ती सागरों से प्राप्त किया जाता है। पश्चिमी तट के मालाबार क्षेत्र में मेकेरल, सार्डीन, पाम्फ्रेट, सूर आदि मछलियां मुख्य रूप से पकड़ी जाती हैं। अक्टूबर से जनवरी तक कोंकण तट पर मेकेरल के भारी झुंड निकलते हैं। महाराष्ट्र और गुजरात के तटीय क्षेत्रों से हारपोडन, नहेरियस, घील, रावा, दारा आदि मछलियां भारी संख्या में पकड़ी जाती हैं। पूर्वी तटों पर पकड़ी जाने वाली मछलियों में मेकेरल और सार्डीन अधिक संख्या में होती हैं। पश्चिमी बंगाल के तट से सार्डीन, एन्कोवी, क्लुपिआड मछलियां मुख्य रूप से पकड़ी जाती है। तमिलनाडु के तट पर भी कई प्रकार की मछलियां पकड़ी जाती है।

हमारे देश में जितनी मछलियां पकड़ी जाती हैं उनका एक तिहाई भाग सार्डीन होता है। सार्डीन भोजन के रूप में एक बहुत ही स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ है। इससे निकाले जाने वाले तेल का उपयोग जूट, चमड़ा और साबुन उद्योग में होता है। देश में मेकेरल नामक मछलियां भी भारी मात्रा में पकड़ी जाती हैं।

अंडमान द्वीप समूह, क्यूलोन, रत्नागिरी, नागरपत्तनम आदि अनेक तटों पर मेकेरल भारी संख्या में पकड़ी जाती हैं।

मछलियों के साथ-साथ भारतीय तटवर्ती सागरों में झींगे और चिगट भारी मात्रा में पकड़े जाते हैं। इनको अमरीका जैसे देश के लिए निर्यात किया जाता है। झींगे और चिंगट आन्ध्रप्रदेश के तट पर, केरल के तट पर पकड़े जाते हैं। भारतीय झींगे और चिंगट संसार मे सबसे उत्तम माने जाते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि धरती के सागरों और महासागरों से अनेक प्रकार की खाद्य संपदाएं प्राप्त होती हैं। महासागरों से प्राप्त होने वाली खाद्य संपदा आज का ही समाधान नहीं है बल्कि आने वाले कल में भी भोजन के विशाल भंडार हमें सागरों से प्राप्त होते रहेंगे।

अध्याय 4

समुद्री वनस्पति

जिस प्रकार सागर अनेक जीवधारियों का विशाल समूह है उसी प्रकार सागरों में वनस्पति भी काफी मात्रा में मिलती है। वनस्पति ऐसे संसाधन हैं जो सागर के जीवों के लिए भोजन का काम करती हैं और मानव भी समुद्री वनस्पतियों को भोजन के रूप में प्रयोग करता है।

वनस्पतियां सागर के उन स्थानों पर मिलती हैं जहां तक सूरज का प्रकाश पहुंच सकता है। सूरज के प्रकाश के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया होती है जिससे पौधे अपना भोजन बनाते हैं। पौधे सामान्यतः सागर के जल के ऊपर, जल की सतह के कुछ नीचे तक, उथले जल और किनारों के पास मिलते हैं। सागरों की गहराई में पौधे नहीं उगते हैं।

महासागरों की वनस्पतियां असीमित संसाधनों का निर्माण करती हैं। इनसे हमें भोजन और अनेक औषधियां प्राप्त होती हैं। खाद्य संपदा के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए समुद्री वनस्पति का ज्ञान होना अति आवश्यक है। कुछ समुद्री जीव ऐसे होते हैं जो समुद्री धाराओं और ज्वारों के साथ तैरते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंच जाते हैं।

फाइटोप्लान्कटन ऐसी समुद्री वनस्पति है जो समुद्री जीवों के लिए भोजन का काम करती है। इस वर्ग में डाइटम, कोकोलिथोफोर आते हैं। समुद्रों में डाइटम भारी संख्या में मिलते हैं। समुद्री वनस्पति को

अपनी वृद्धि के लिए सागरों के जल में घुले हुए ल
मिलती है। चित्र 4.1 में पादप प्लान्कटन दिखाए ग
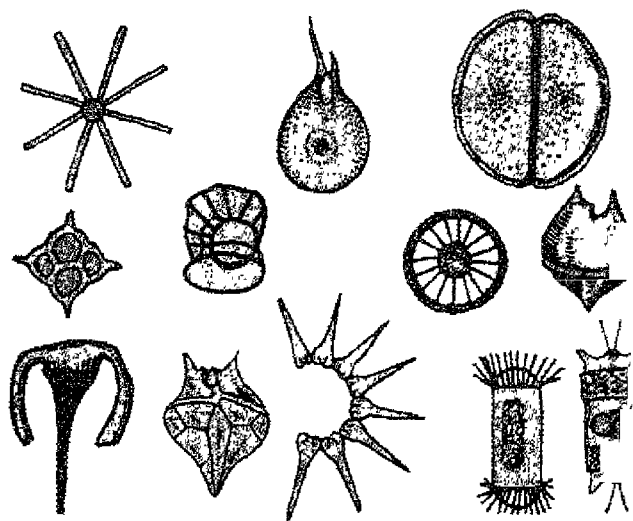
चित्र 4.1 : पादप प्लान्कटन

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया सागर की सतह पर
होती है क्योंकि वहां सूरज का प्रकाश सबसे अधिक
इसलिए समुद्र की सतह पर पादप प्लान्कटनों की संख्या
होती है। परीक्षणों से देखा गया है कि जब पानी की
होती है तो पादप प्लान्कटनों की संख्या बढ़ जाती है। स
क्षेत्र में उथल-पुथल अधिक होती है वहां पर पादप प
संख्या भी अधिक होती है।

समुद्री शैवाल या समुद्री घास एक माना हुआ स
है। हमारा समुद्री तट लगभग 6000 किलोमीटर लम्बा
समुद्री जलधाराओं के साथ शैवाल बहुत अधिक मात्रा
समुद्री शैवालों से खाद्य सामग्री और दवाइयां प्राप्त की
प्रकार की वनस्पतियों पर दूसरे विश्वयुद्ध के बाद में क
था। शैवाल हमें प्रोटीन देते हैं। भूरे तथा हरे शैवाल हमे

चित्र 4.2 : जिलिडिएला
अगर अगर का स्रोत

चित्र 4.3 : ग्रासीलरिया
अगर अगर का स्रोत
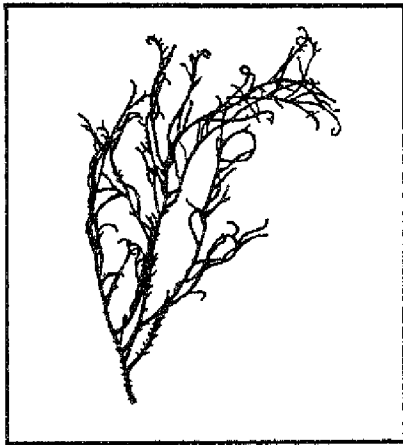
चित्र 4.4 : दिप्निमा—कैरागिनन का स्रोत

जिलिडिएला और ग्रासीलरिया आदि अगर-अगर के स्रोत हैं दिप्निमा—कैरागिनन का जाना-माना स्रोत है। चित्र 4.2, 4.3 और 4.4 में यह पौधे दिखाए गए हैं। हमारे देश में अगर-अगर का उत्पादन प्रतिवर्ष 50 से 60 टन है। कैरागिनन का उपयोग खाद्य सामग्री विशे रूप से मिल्क चॉकलेट बनाने में होता है।

भूरे रंग की शैवाल से आल्जीनेट बनाया जाता है। इसका उपयोग

औषधि निर्माण में होता है। कपड़ों की छपाई के लि
प्रयोग किया जाता है। हमारे देश में आल्जीनेट का उ
की शैवाल सरगासम (चित्र 4.5) और टर्बिनेरिया (चित्र
है। हमारे देश में कई औद्योगिक इकाइयां लगभग 700
का उत्पादन कर रही हैं।

चित्र 4.5 : सरगासम—एल्गिन और आयोडीन का स्रोत

चित्र 4.6 : टर्बिने
का स्रोत

प्यूकोयडर औषधि निर्माण में प्रयोग हो रहा है।
को रोकने के लिए प्रयोग किया जाता है। समुद्री
आयोडीन प्राप्त की जाती है। यह गोइटर या गलगंड
मे बहुत ही प्रभावशाली सिद्ध हुई है। यह देखा गया
शैवाल में आयोडीन की मात्रा 200 से 500 मिलीग्राम
होती है। एसपैरेगौप्सिस एवं लिवरोजया से अधिकांश मात्र
प्राप्त की जाती है। चित्र 4.7 में एसपैरेगौप्सिस दि
सरगासम से भी आयोडीन प्राप्त की जाती है। अल्वा नाम
से प्रोटीन प्राप्त की जाती है। चित्र 4.8 में अल्वा वनस्प
है।
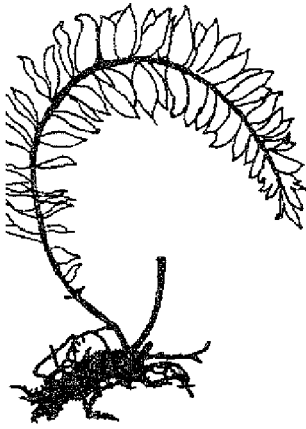
चित्र 4.7 : एसपैरेगौप्सिस
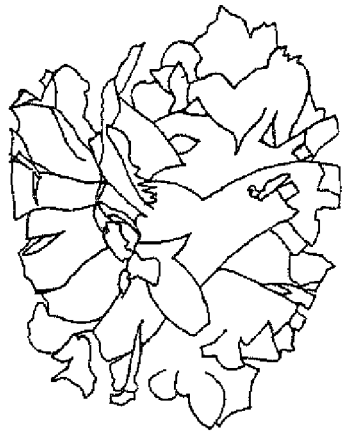
चित्र 4.8 : अल्वा

एन्ट्रोमोर्फा फ्लेक्सोझा (चित्र 4.9) से जीवाणुनाशक पदार्थ प्राप्त किया जाता है। यह पदार्थ मानव के लिए बहुत प्रभावशाली सिद्ध हुआ है
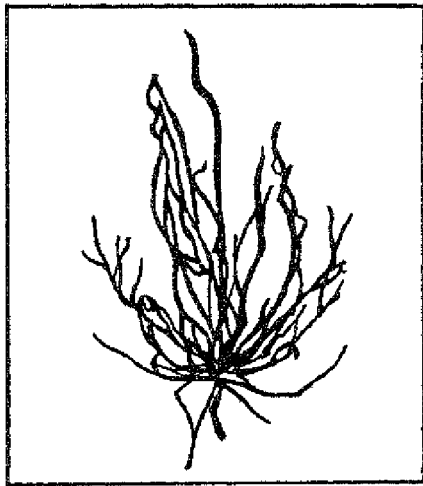
चित्र 4.9 : एन्ट्रोमोर्फा

ऐसे बहुत से जीव-जन्तु और वनस्पतियां हैं जिनसे बहुत-सी औषधियां प्राप्त की जाती हैं। इन जीव-जन्तुओं और वनस्पतियों का विवरण अगले अध्याय में दिया गया है।

अध्याय 5

समुद्री औषधि संसाधन

ऐसे बहुत से जीव-जन्तु और समुद्री पौधे हैं जिनसे अनेक औषधियां प्राप्त की जाती हैं। वर्तमान युग में समुद्री सजीव संसाधन औषधि क्षेत्र में बड़े उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। इनका विवरण हम सक्षेप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

1. मोती और ओयस्टर—जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि ओयस्टर से मोती प्राप्त करते हैं, यह मोती औषधि क्षेत्र में बहुत उपयोगी है। मोती से मोती भस्म और मोती पिस्टी बनाई जाती है। मोती की भस्म और पिस्टी से अनेक औषधियां बनाई जाती हैं। मोती से बनी औषधियां बवासीर, खांसी तथा तपेदिक के इलाज के लिए बहुत उपयोगी हैं।

ओयस्टर के छिलके से एक प्रकार का मलहम बनाया जाता है जो पैरों में पड़ी दरारों के लिए बहुत ही उपयोगी होता है। इसी छिलके से बनाई गई भस्म दस्तों के उपचार के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

2. घोंघा, कौड़ी, शंख—शंख हमारे देश में पूजा के समय ध्वनि पैदा करने के लिए प्रयोग किया जाता है। कौड़ी, शंख आदि के शैल काफी सख्त होते हैं। इनको प्रयोग में लाकर कुछ औषधियां बनाई जाती हैं जो बवासीर, खांसी और पेट की व्याधियों में काफी प्रयोग होती हैं। इन खोलों से बनी औषधियां आंख के रोगों में भी काफी प्रयोग की जाती हैं।

3. प्रवाल--प्रवाल कई प्रकार के होते हैं जिनमें हैलीपोरा और मिलीपोरा मुख्य हैं। मिलीपोरा से बनाया गया बरपाम मधुमेह रोग में काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है। यह औषधि त्वचा के रोगों और मूत्राशय में सिकुड़न आदि रोगों के लिए काफी लाभदायक सिद्ध हुई है।

4. अम्बर (Amber)--यह नर ह्वेल की आंतों से पैदा होने वाला एक कठोर पदार्थ है। इस पदार्थ को अम्बरग्रीस कहते हैं। इसे फेफड़ों के रोगों, बुखार आदि के इलाज के लिए प्रयोग करते हैं।

5. सीलेंटरेट (Coelentrate)--इनके अतिरिक्त पोरिफेरा, सीलेंटरेट, ब्रायोजोआ, अकाइनोडरमेटा, समुद्री केकड़ा आदि अनेक जीवों से औषधियां बनाई जाती हैं जो बहुत से रोगों में प्रयोग होती हैं।

अनेक समुद्री वनस्पतियों से भी औषधियां बनाई जाती हैं। समुद्री बैक्टीरिया और फंगी से कई एन्टीवायरल, एन्टीफंगल औषधियां बनाई जाती हैं। समुद्री शैवालों से बहुत सारी दवाएं बनाई जाती हैं। समुद्री काई से, जिसे एल्गी कहते हैं, रक्तबहाव को रोकने की औषधियां बनाई जाती हैं। समुद्री शैवालों से आयोडीन बनाई जाती है। एक प्रकार के समुद्री गुल्म से एक रस निकाला जाता है जो हिचकी आदि के लिए बहुत उपयोगी है। ऑक्सीट्रापिस नामक औषधि समुद्री घास से तैयार की जाती है। इसका प्रयोग मुख्य रूप से पक्षाघात, गठिया आदि के लिए किया जाता है।

सी-मॉस से भी कई औषधियां बनाई जाती हैं।

समुद्री खनिजों से भी बहुत-सी औषधियां बनाई जाती हैं। स्पंज स्टोन से जो औषधि बनाई जाती है वो मानव के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। कुछ सिलिकेटों से, जो मछलियों के सिर से प्राप्त होते हैं, पाउडर के रूप में औषधियां बनाई जाती हैं जो मानव के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। स्पंज स्टोन से, जो स्पंज के शरीर में पाया जाता है, एक ऐसी औषधि बनाई जाती है जो बहते रक्त को रोक देती है। इस पाउडर को जिस स्थान पर छिड़का जाता है वहां से रक्तबहाव रुक जाता है।

कैंसर के इलाज के लिए भी समुद्री संसाधनों से कुछ औषधियां

बनाई गई है जो काफी उपयोगी सिद्ध हुई है। अण्डमान और निकोबार द्वीपसमूह में स्पंजों की 70 प्रजातियां पाई जाती हैं जो कई प्रकार की औषधियां बनाने में प्रयोग होती हैं। इन्हीं द्वीपसमूहों में अनेक प्रकार के शैवाल मिलते हैं जो बहुत से रसायन और औषधियां बनाने में काम आते हैं। एक समुद्री मोलस्क से रक्त में ग्लूकोज कम करने वाली औषधियां बनाई जाती हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं समुद्री प्राणियों, वनस्पतियों और खनिजों से अनेक औषधियां बनाई जा रही हैं।

यहां यह जान लेना जरूरी है कि संसार में पौधों की लगभग 3,50,000 प्रजातियां हैं जिनमें 30,000 प्रजातियां शैवालों की हैं। ये शैवाल जीवमंडल को ऑक्सीजन देते हैं, मछलियों, पशुओं और मानव को भोजन देते हैं और इनमें से बहुत से औषधियों, उर्वरकों के रूप में प्रयोग किए जाते हैं।

हमारे देश में ऐसे अनेक संस्थान हैं जो समुद्री संसाधनों से विभिन्न औषधियां बनाने का काम कर रहे हैं। ये संस्थान हैं—एन. आई. ओ. गोवा, सी.डी.आर.आई. लखनऊ, आन्ध्रा विश्वविद्यालय वाल्टेयर, आई.आई.सी.टी. हैदराबाद, कलकत्ता विश्वविद्यालय, सी.एस. एम.आर.आई. भावनगर, मेडिकल कॉलेज दिल्ली।

हो सकता है कि आने वाले समय में और भी अनेक समुद्री संसाधनों का पता लग जाए और अनेक औषधियां हमारे सामने आ जाएं।

अध्याय 6

समुद्री खनिज संपदा

सागरों से प्राप्त खनिज संपदा निर्जीवों की श्रेणी में आती है। खनिज वास्तव में ऐसे पदार्थ होते हैं जिनसे बहुत से मानव उपयोगी पदार्थ प्राप्त किए जाते हैं। कुछ वर्षों के अनुसंधानों से पता चला है कि सागरों में खनिज संपदा के विशाल भंडार हैं। विश्लेषणों से ज्ञात हुआ है कि समुद्र के प्रत्येक घनमील पानी में लगभग 160,000,000 टन खनिज पदार्थ घुले हुए हैं। मानव इन खनिज पदार्थों को प्राप्त करने के लिए प्रयास कर रहा है। सागरों से प्राप्त होने वाले खनिज पदार्थों का विवरण इस अध्याय में प्रस्तुत किया गया है।

पृथ्वी की ऊपरी सतह जिसे हम भूपर्पटी या अर्थक्रष्ट कहते हैं मुख्य रूप से नौ तत्वों से मिलकर बना है। ये तत्व हैं—
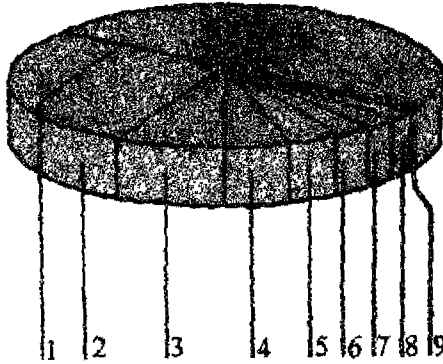
चित्र 6.1 : भूपर्पटी में पाये जाने वाले नौ मुख्य तत्व

1. आक्सीजन 46.6%
2. सिलिकॉन 27.7%
3. एल्यूमिनियम 8.1%
4. लोहा 5%
5. कैल्शियम 3.6%
6. सोडियम 2.8%
7. पोटाशियम 2.6%
8. मैगनीशियम 2.1%
9. टाइटेनियम 0.44%

इन सभी तत्वों की प्रतिशत मात्रा चित्र 6.1 की तालिका में दिखाई गई है। पृथ्वी की सतह पर सबसे कम मात्रा ऐस्टेटिन की है।

यदि हम संसार के सभी महासागरों और सागरों पर विचार करें तो इनका 99% भाग पांच तत्वों से मिलकर बना है। ये पांच तत्व हैं–
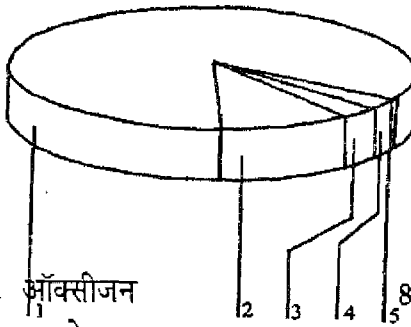
चित्र 6.2 : सागरों में पाये जाने वाले पांच मुख्य तत्व

ये सभी तत्व चित्र 6.2 में दिखाए गए हैं।

संसार के महासागरों के जल में पाए जाने वाले सभी तत्वों का विवरण तालिका 6.1 में दिया गया है। इन तत्वों के संयोग से बनी

संपदा की प्रतिशत मात्रा इस प्रकार है–

1.	सोडियम क्लोराइड (खाने का नमक)	..75%
2.	मैगनीशियम क्लोराइड	10.89%
3.	मैगनीशियम सल्फेट	4.73%
4.	कैल्शियम सल्फेट	3.60%
5.	कैल्शियम कार्बोनेट	0.35%
6.	मैगनीशियम ब्रोमाइड	0.21%
7.	दूसरे खनिज	0.01%

न सभी खनिजों को चित्र 6.3 में दिखाया गया है।

$MnBr_2$
$CaCO_3$
$K2SO_4$
$K2SO_4$
$MnSO_4$
$CaSO_4$
MnCl
NaCl
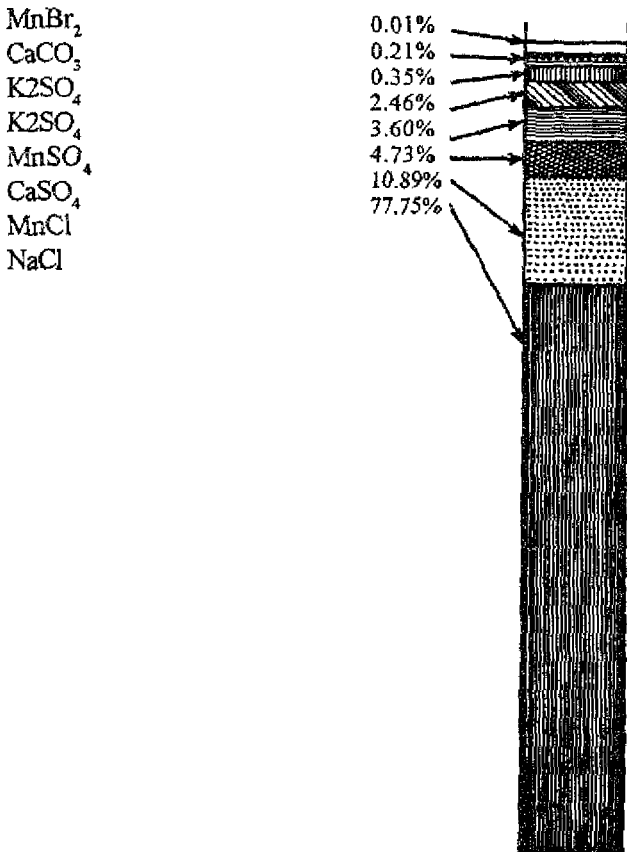
चित्र 6.3 : सागर के जल में पाये जाने वाले पदा

तालिका 6.1 : समुद्री जल में तत्वों की मात्रा

तत्व	मात्रा मि.ग्रा./लि.	सागर में कुल मात्रा (टनों में)
क्लोरीन	19,000.0	29.3×10^{15}
सोडियम	10,500.0	16.3×10^{15}
मैगनीशियम	1,350.0	2.1×10^{15}
गंधक	885.0	1.4×10^{15}
कैल्शियम	400.0	0.6×10^{15}
पोटाशियम	380.0	0.6×10^{15}
ब्रोमीन	65.0	0.1×10^{15}
कार्बन	18.0	0.04×10^{15}
स्ट्रांशियम	8.0	$12,000 \times 10^{9}$
बोरोन	4.6	$7,100 \times 10^{9}$
सिलिकॉन	3.0	$4,700 \times 10^{9}$
फ्लुओरीन	1.3	$2,000 \times 10^{9}$
आर्गन	0.6	930×10^{9}
नाइट्रोजन	0.5	780×10^{9}
लीथियम	0.17	260×10^{9}
रूबीडियम	0.12	190×10^{9}
फास्फोरस	0.17	110×10^{9}
आयोडीन	0.06	93×10^{9}
बेरियम	0.03	47×10^{9}
इंडियम	0.02	31×10^{9}
जस्ता	0.01	18×10^{9}
लोहा	0.01	16×10^{9}
एल्यूमिनियम	0.01	16×10^{9}
मालिब्डेनम	0.01	16×10^{9}
सेलीनियम	0.004	6×10^{9}
टिन	0.003	5×10^{9}
तांबा	0.003	5×10^{9}
आर्सेनिक	0.003	5×10^{9}

यूरेनियम	0.003	5×10^{9}
निकिल	0.002	3×10^{9}
वैनेडियम	0.002	3×10^{9}
मैगनीज	0.002	3×10^{9}
टाइटेनियम	0.001	1.5×10^{9}
एन्टीमनी	0.0005	0.8×10^{9}
कोबाल्ट	0.0005	0.8×10^{9}
सीजियम	0.0005	0.8×10^{9}
क्यूरियम	0.0004	0.6×10^{9}
इट्रियम	0.0003	4×10^{8}
चांदी	0.0003	5×10^{8}
लैंथेनम	0.0003	5×10^{8}
क्रिप्टान	0.0003	5×10^{8}
निआन	0.0001	150×10^{6}
कैडमियम	0.0001	150×10^{6}
टंगस्टन	0.0001	150×10^{6}
जीनॉन	0.0001	150×10^{6}
जर्मेनियम	0.00007	110×10^{6}
क्रोमियम	0.00005	78×10^{6}
थोरियम	0.00005	78×10^{6}
स्कैंडियम	0.00004	62×10^{6}
सीसा	0.00003	46×10^{6}
पारा	0.00003	46×10^{6}
गेलियम	0.00003	46×10^{6}
बिस्मथ	0.00002	31×10^{6}
नायोबियम	0.00001	15×10^{6}
थैलियम	0.00001	15×10^{6}
हीलियम	0.000005	8×10^{6}
सोना	0.000004	6×10^{6}
प्रोटैक्टीनियम	2×10^{-9}	3,000
रेडियम	1×10^{-10}	150
रेडान	0.6×10^{-15}	1×10^{-3}

सागर के जल मे कितना नमक मिलता है इसके विषय मे अगले अध्याय में जानकारी दी गई है।

खनिज संपदा के आधार पर समुद्र को पांच भागों में बांटा जा सकता है।

1. समुद्री पानी, 2. समुद्री बीच, 3. महाद्वीपीय शेल्फ, 4. अपतटीय समुद्रीय क्षेत्र तथा 5. समुद्री तल। इनमें खनिज संपदा कैसे फैली है इसका विवरण निम्न प्रकार है--

1. समुद्री पानी

जल एक ऐसा तरल पदार्थ है जिसमें समुद्र में मिलने वाले लगभग सभी पदार्थ उसके पानी में घुले रहते हैं। अनुसंधानों से पता चला है कि समुद्र के पानी में लगभग 60 तत्व घुले रहते हैं। इनकी सूची तालिका 6.1 में दी गई है। समुद्र के जल में 3.5% लवण घुले हुए हैं। इसके अनुसार सागर के 1 घनमील जल में जिसका वजन 4.7 अरब टन है लगभग 1660 लाख टन खनिज संपदा घुली है।

समुद्री जल में जो 60 तत्व घुले हैं उनमें से सोडियम, क्लोरीन, मैगनीशियम और ब्रोमीन ऐसे चार तत्व हैं जिनको व्यावसायिक रूप में निकाला जा सकता है। सोडियम और क्लोरीन को नमक के रूप में प्राप्त किया जाता है। मैगनीशियम को खनिजों के रूप में प्राप्त किया जाता है।

समुद्र के पानी में खाने के नमक की मात्रा सबसे अधिक है। सूरज की गर्मी से समुद्र के पानी का वाष्पीकरण करके हर वर्ष दुनिया में लाखों टन नमक प्राप्त किया जाता है। विश्व के लगभग 60 देशों में नमक निकालने का यही तरीका लम्बे समय से प्रयोग किया जा रहा है।

समुद्री पानी से ब्रोमीन की 13% आवश्यकताएं पूरी की जाती है। ब्रोमीन को औषधियों में और इथिलीन डाइब्रोमाइड के रूप में गैसोलीन की गुणवत्ता बढ़ाने में प्रयोग किया जाता है। सिल्वर ब्रोमाइड के रूप में इसे फोटोफिल्मों पर तह चढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

समुद्र के पानी से 70% मैगनीशियम धातु और 33% मैगनीशियम के लवण प्राप्त किए जाते हैं। गन्धक की काफी मात्रा समुद्री जल से प्राप्त की जाती है। समुद्री जल में और समुद्री जीवों के शरीर में कार्बन काफी मात्रा में मिलता है। समुद्री पानी में बोरोन तत्व बोरिक एसिड के रूप में मिलता है। डाइटम नामक छोटे जीवों के शरीर से सिलिकॉन प्राप्त होता है।

2. समुद्री बीच

समुद्री बीच समुद्र के किनारे के वे स्थान हैं जो समतल होते हैं और रात्रि में समुद्री लहरें उनके ऊपर तक आती हैं। बीच पर लोग बैठते हैं तथा सनबाथ का आनन्द लेते हैं। बम्बई और गोआ में बहुत से बीच हैं।

खनिज निकालने की दृष्टि से समुद्री बीचों का अपना महत्व है। धातु निष्कासन में जो कूटने और पीसने की क्रियाएं करनी पड़ती हैं वह समुद्री तरंगों द्वारा पूरी कर दी जाती हैं। समुद्री बीचों से-हीरा, सोना, मैग्नेटाइट, कोलम्बाइट, इलमेनाइट, जिरकॉन, शीलाइट, मोनानाइट, प्लेटीनम और सिलिका जैसे पदार्थ प्राप्त होते हैं। संसार के सागरों मे बहुत से ऐसे बीच हैं जहां पर खनिज प्राप्त करने के लिए खनन व्यवसाय किया जाता है।

बहुत पुराने समय से मानव जिरकॉन, टाइटेनियम, सोना और हीरा प्राप्त करने का कार्य करता आ रहा है। अफ्रीका के दक्षिण-पश्चिमी किनारों पर हीरे प्राप्त करने का कार्य किया जाता है। जापान के दक्षिण-पश्चिमी किनारों पर मैग्नेटाइट खनिज निकाला जाता है। अलास्का में सोने का पता लगाया गया है।

3. महाद्वीपीय शेल्फ

महाद्वीपीय शेल्फ हमारी पृथ्वी का लगभग एक करोड़ वर्ग मील क्षेत्र घेरे हुए है। महाद्वीपीय शेल्फ की चट्टानें दूसरी चट्टानों से मिलती-जुलती हैं। इसीलिए उनसे भी वे खनिज प्राप्त होते हैं जो धरती की चट्टानों से होते हैं। महाद्वीपीय शेल्फ चट्टानों में धरती की चट्टानो

की 20% खनिज संपदा मौजूद है। अमरीका के पूर्वी टेक्सास के क्षेत्रों में पिछले 50 वर्षों में अर्थात् सन् 1940 से 1990 तक 500 लाख टन जन्तुकवच प्राप्त किए गए थे। संसार के दूसरे स्थानों से भी शैल प्राप्त किए जाते हैं। कुछ स्थानों पर जीवकवचों से कारखानो में सीमेंट बनाया जाता है।

ग्लैकोनाइट जो पोटाशियम का यौगिक है महाद्वीपीय शेल्फों से प्राप्त किया जाता है। यह पदार्थ एक प्रकार की खाद बनाने के काम में प्रयोग किया जाता है।

पेरू, चिली, मैक्सिको, अर्जेंटाइना, दक्षिणी अफ्रीका, जापान आदि की शेल्फों में फास्फोराइट के विशाल भंडार हैं। यह पदार्थ नौड्यूल्स के रूप में मिलता है। मलेशिया, थाइलैंड, इन्डोनेशिया की शेल्फों से टिन प्राप्त किया जाता है। महाद्वीपीय शेल्फों से सोना, प्लेटीनम और हीरे भी प्राप्त किए जाते हैं।

4. अपतटीय समुद्री क्षेत्र

अपतटीय समुद्री क्षेत्रों में इंग्लैंड, जापान, न्यूफाउन्डलैंड और फिनलैंड की अपतटीय चट्टानों से भारी मात्रा में कोयला और लोहा प्राप्त किया जाता है। अपतटीय चट्टानों में गन्धक के भी विशाल भंडार हैं। लोइसिआना के ग्रान्ड आइसल से लगभग 10 किलोमीटर दूर गन्धक के विशाल भंडार हैं। यहां पर भारी मात्रा में गन्धक निकाला जाता है। अमरीका में अधिकांश गन्धक तटीय लवण गन्धकों के गुम्बदों से प्राप्त किया जाता है।

विश्व की बहुत-सी अपतटीय चट्टानों से पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस प्राप्त की जा रही है। पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के विषय में एक अलग अध्याय में जानकारी दी गई है। आज की गणनाओं के अनुसार महाद्वीपीय शेल्फों में 1000 अरब टन पैट्रोलियम मौजूद है।

5. समुद्री तल

सागरों की तली हमारी पृथ्वी की तरह ऊबड़-खाबड़ है। इस पर अनेक चट्टानें, पर्वत और खाइयां हैं। सागर की तलहटी में अनेक

खनिज हैं। सागरों से मिलने वाली नदियां अपने पानी के साथ बहुत से खनिज ले जाती हैं जो सागर की तलहटी में जम जाते हैं। मरने वाले समुद्री जीव-जन्तु भी सागर की तलहटी में जमा होते रहते हैं। सागर की तलहटी में फटने वाले ज्वालामुखियों से निकलने वाला लावा पृथ्वी के गर्भ से बहुत से खनिजों को सागर की तली में जमा कर देता है। इस प्रकार सागर की तलहटी में अनेक खनिज प्राप्त होते है। सागरों की तली में पिछले चार अरब वर्षों से पदार्थ जमते जा रहे हैं। इन जमावटों में अनेक खनिज छिपे पड़े हैं जिनका विवरण इस प्रकार है—

(अ) लाल मिट्टी

सागरों की तलहटी के सर्वेक्षण से पता लगा है कि लगभग 1020 लाख वर्ग किलोमीटर में लाल मिट्टी की बहुतायत है। 200 मीटर की औसत गहराई में लगभग 10^{16} टन लाल मिट्टी के भंडार हैं। 0.5 से 5×10^{8} टन लाल मिट्टी सागरों की तलहटी में हर वर्ष जमा होती रहती है। इस मिट्टी में अनेक तत्व हैं। खनिज संपदा के दृष्टिकोण से यह मिट्टी बहुत अधिक महत्वपूर्ण नहीं है लेकिन मिट्टी उत्पादों की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण है। इस मिट्टी में लगभग 15% एल्यूमिनियम ऑक्साइड होता है और 0.2% तांबा होता है। इनके अतिरिक्त लाल मिट्टी में निकल, कोबाल्ट, वैनाडियम, सीसा, जस्ता, जिरकोनियम आदि तत्व होते हैं। निश्चय ही लाल मिट्टी भविष्य में तत्व के भण्डारों के रूप में मानव के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

(आ) कैलसेरियस ऊज

कैलसेरियस ऊज सागर की तलहटी के 1280 लाख वर्ग किलोमीटर में है। समस्त क्षेत्रफल का यह लगभग 20 प्रतिशत भाग है। इन ऊजों की मोटाई लगभग 400 मीटर है। यदि गणना की जाए तो इस ऊज का वजन 10^{16} टन होगा। ऐसा देखा गया है कि प्रतिवर्ष 1.5 अरब टन कैलसेरियस ऊज समुद्र की तलहटी में बढ़ जाती है।

इससे 0.2 अरब टन चूना हर साल प्राप्त किया जाता है। यदि सागर की तली से 10 प्रतिशत चूना हर वर्ष निकाला जाए तो आज की खपत के अनुसार ये भंडार 100 लाख वर्षों के लिए पर्याप्त होंगे।

(इ) सिलिसियस ऊज

सागरों की तलहटी में लगभग 380 लाख वर्ग किलोमीटर में सिलिसियस ऊज की भरमार है। इन ऊजों का 10^{15} टन भार सागर की तली में जमा हुआ है। इस मिट्टी को फिल्टर बनाने में प्रयोग किया जाता है। इस मिट्टी से अग्नि और ध्वनि अवरोधक भी बनाए जाते हैं।

(ई) बहुधात्विक पिंड

सागरों की तली में बिखरे धातुओं के पिंड हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। आलू के आकार की ये गोलाकार रचनाएं तली के लगभग 10 प्रतिशत भाग को घेरे हुए हैं। इन पिंडों में मुख्य रूप से मैगनीज तत्व की बहुतायत होती है। इन पिंडिकाओं की खोज लगभग 100 वर्ष पहले चैलेंजर और एलबैट्रोस अभियानों के दौरान हुई थी। इन पिडिकाओं का 1.5×10^{12} टन वजन प्रशान्त महासागर की तलहटी में बिखरा पड़ा है। इनमें से 25 से 50 प्रतिशत पिंड मैगनीज के हैं। इनके बनने की दर साल में एक करोड़ टन है। मैगनीज के अतिरिक्त इन पिंडिकाओं में लोहा, तांबा, कोबाल्ट, निकल, क्रोमियम, जस्ता आदि धातुएं भी हैं। आने वाले वर्षों में इन पिंडिकाओं में मिलने वाली विभिन्न धातुओं की मात्राएं तालिका 6.2 में दिखाई गई हैं।

तालिका 6.2 : बहुधात्विक पिंडकाओं में विभिन्न धातुएं

धातुएं	तत्वों का द्रव्यमान (अरब टन में)
मैगनीशियम	25
एल्यूमिनियम	43
टाइटेनियम	9.9
वैनाडियम	0.8

मैगनीज	358
लोहा	207
कोबाल्ट	5.2
निकल	14.7
तांबा	7.9
जस्ता	0.7
गैलियम	0.015
जिरकोनियम	0.93
मोलीबडैनम	0.77
चांदी	0.001
सीसा	1.3

विश्व के सभी महासागरों में लगभग 17,000 करोड़ टन बहुधात्विक पिंडिकाएं बिखरी पड़ी हैं। हमारे हिन्द महासागर के एक करोड़ पचास लाख वर्ग किलोमीटर में ये पिंडिकाएं हमारे लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होंगी। चित्र 6.4 में बहुधात्विक पिंड दिखाए गए हैं।

(उ) कोयला

समुद्र की तलहटी में कोयले के विशाल भंडार हैं। सन् 1620 में स्काटलैंड में समुद्र की तली से कोयला निकालने के प्रयास किए गए थे। उसके बाद अब तक सागरों से कोयला प्राप्त करने के अनेक प्रयास किए गए हैं और सागरों में कोयले के विशाल भंडारों का पता लगाया गया है।

कनाडा, ब्रिटेन, जापान, चीन आदि अनेक देशों में तटवर्ती सागरों की तली से कोयला निकाला जा रहा है। समुद्र की तलहटी से निकाला जाने वाला कोयला धरती से निकाले जाने वाले कोयले की तुलना में केवल 2% है। कोयला निकालने का काम केवल उन स्थानों पर किया जा रहा है जो तट से 25 किलोमीटर दूर तक हैं। आने वाले कुछ वर्षों में ऐसे साधन विकसित कर लिए जाएंगे जिनसे 50 किलोमीटर की दूरी तक कोयला निकाला जाना सम्भव हो जाएगा।

समुद्रों से दूसरी खनिज संपादाएं—समुद्र की कुछ वनस्पतियों

और जीवों से भी हमें खनिज प्राप्त होते हैं। प्लान्कटन और शैवाल ऐसे ही जीव हैं। इनसे हमें वैनेडियम, लोहा, टाइटेनियम, आयोडीन ब्रोमीन, पोटाशियम, सोना और यूरेनियम जैसे तत्व प्राप्त होते हैं। मृत मछलियों की हड्डियों में भी बहुत से तत्व संचित होते रहते हैं। सीसा, टिन, तांबा आदि तत्व इनसे ही प्राप्त होते हैं। आयोडीन की अधिकांश आवश्यकताएं समुद्री शैवालों से ही प्राप्त करके पूरी की जाती है।
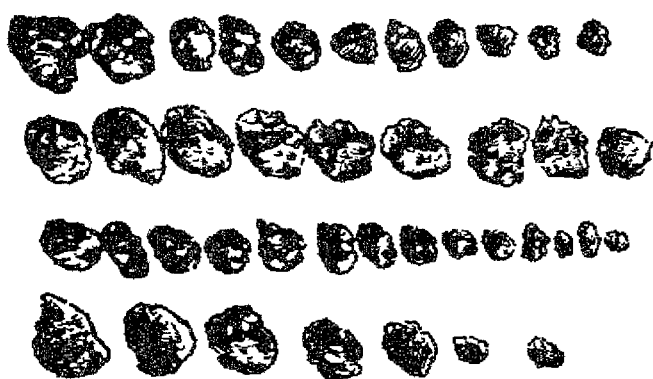
चित्र 6.4 : बहुधात्विक पिंडिकाएं

इस प्रकार सागर का चप्पा-चप्पा खनिज संपदा से भरा पड़ा है। यह खनिज संपदा मानव की अनेक आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। समुद्र को हम रत्नाकर कहते हैं। यह संज्ञा सागर के लिए ठीक ही दी गई है।

अध्याय 7

समुद्रों से नमक

धरती के प्राणियों की उत्पत्ति समुद्र से मानी जाती है। यह भी माना जाता है कि जीवित रहने के लिए नमक की आवश्यकता होती है। चूंकि जीवों की उत्पत्ति सागरों से हुई और सागरों का पानी खारा था इसलिए ये जीव बगैर खारे पानी के जीवित नहीं रह सकते थे। धरती पर जीवित रहने के लिए इन्हें नमक की आवश्यकता हुई और किसी न किसी रूप में इन्होंने नमक को शरीर में पहुंचाना जारी रखा।

नमक, सोडियम और क्लोरीन का एक यौगिक है जिसे हम सोडियमक्लोराइड कहते हैं। शारीरिक क्रियाओं को चलाने के लिए हम प्रतिदिन भोजन के साथ सब्जियों और रोटियों में नमक खाते हैं।

नमक का उपयोग उद्योगों में भी किया जाता है। लाखों टन नमक मछलियों और दूसरे खाने के पदार्थों को संरक्षित करने के लिए प्रतिवर्ष दुनिया में प्रयोग किया जाता है। चमड़े के कारखानों में चर्म शोधन में भी नमक का प्रयोग किया जाता है। बर्फ में नमक मिलाकर हिममिश्रण तैयार किया जाता है जो कुल्फी जमाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

19वीं और 20वीं सदी में सागर विशेषज्ञों द्वारा किए गए परीक्षणों से पता चला कि सागरों के पानी में बहुत से लवण घुले हुए हैं। सागर के पानी में 3.5% लवण हैं जिनमें नमक सबसे ज्यादा है। वैज्ञानिक अनुमानों के अनुसार सागर के एक घनमील पानी में जिसका वजन लगभग 4.7 अरब टन है उसमें 1660 लाख टन लवण हैं।

संसार के लगभग 60 देशों में समुद्र के पानी से नमक का उत्पादन किया जाता है तथा अन्य 30 देशों में स्थानीय उपयोग के लिए कम मात्रा में नमक पैदा किया जाता है। वास्तव में तट रेखा के साथ वाले प्रत्येक देश द्वारा नमक पैदा किया जाता है। संसार की 38 प्रतिशत नमक की आवश्यकताएं प्रतिवर्ष सागरों से पूरी की जाती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में इस नमक का मूल्य लगभग 400 लाख डॉलर है।

यदि पृथ्वी के समस्त सागरों के जल को सुखाकर उससे प्राप्त नमक को जमा किया जाए तो उससे 288 किलोमीटर ऊंची और 106 किलोमीटर चौड़ी एक ऐसी दीवार बनाई जा सकती है जो भूमध्य रेखा के पूरे गोलार्द्ध पर पृथ्वी का 1 घेरा बना सकती है। नमक का यह वजन पूरे यूरोप महाद्वीप के भार की तुलना में 15 गुना होगा।

अब सवाल उठता है कि समुद्रों का पानी खारा क्यों होता है।

यह सर्वविदित है कि नमक पानी में घुल जाता है। धरती की सतह पर अन्य खनिज पदार्थों के साथ नमक भी होता है। जब बरसात होती है तो धरती की सतह का नमक पानी में घुलकर नदियों में चला जाता है। ये नदियां जब सागर में जाकर गिरती हैं तो यह नमक भी सागर में पहुंच जाता है। सूर्य की गर्मी से सागरों का पानी वाष्प बनकर उड़ता रहता है और वायुमंडल में जाता रहता है। लेकिन नमक समुद्र में ही रह जाता है। समुद्री जलवाष्प बादलों का रूप धारण करके वर्षा के रूप में धरती पर गिरती है। इसी वर्षा के पानी में धरती के खनिज फिर से नदियों के द्वारा सागर में गिराए जाते हैं। वाष्पीकरण और वर्षा के क्रम द्वारा धरती के खनिज लाखों वर्षों से इसी जलचक्र द्वारा सागरों में पहुंच रहे हैं और सागरों का पानी खारा हो गया है। सागरों में फूटने वाले ज्वालामुखियों द्वारा भी पानी में खारापन पैदा होता रहता है।

यह सर्वविदित तथ्य है कि अधिकतर नमक हमें सागरों के जल से प्राप्त होता है। कुछ लाख वर्ष पहले कुछ झीलें समुद्र से अलग हो गई थीं। जिनका पानी धीरे-धीरे वाष्पित होता गया और इतने लम्बे अरसे में वे झीलें अब केवल नमक की झीलें बनकर रह गई

है ऊटा की ग्रेटसाल्ट लेक ऐसी है जिसके पानी मे समुद्र के पानी की तुलना में नमक की मात्रा कई गुनी है। तुर्की की लेकवान झील में 33% नमक है। टेक्सास के दक्षिण में कुछ ऐसी झीलें हैं जिनमें नमक की मात्रा लगभग 10% है। सागरों के गहरे पानी में नमक का खारापन 3.4% से 3.5% तक है। लाल सागर में नमक की मात्रा लगभग 4% है। खुले समुद्रों की तुलना में भूमध्य सागर और लाल सागर में नमक की मात्रा अधिक है। अकेले मृतसागर में जिसका क्षेत्रफल 340 वर्ग किलोमीटर है, ग्यारह अरब साठ करोड़ टन नमक होने का अनुमान है।

अब प्रश्न उठता है कि समुद्र के पानी से नमक कैसे प्राप्त किया जाता है।

समुद्र के पानी से नमक प्राप्त करने के लिए सौर वाष्पीकरण की मदद ली जाती है। आमतौर पर 3 तालाबों या खेतों या टैंको द्वारा नमक प्राप्त किया जाता है। इन तालाबों या खेतों की गहराई लगभग 3 फुट होती है। ये खेत हैं सांद्रण खेत, अम्ल खेत और क्रिस्टलाइजिंग खेत। पहले खेत में जब समुद्र का पानी जाता है तो उसमें से बालू, कीचड़ और छोटे-छोटे जीव-जन्तु बैठ जाते हैं। इसी खेत में पानी का वाष्पीकरण किया जाता है। इस तालाब में सूरज की गर्मी के वाष्पीकरण द्वारा पानी का घनत्व 1.16 हो जाता है। अन्दर आने वाले समुद्री जल को यहां पर वाष्पीकृत किया जाता है।

इसके बाद इस पानी को चूना या अम्ल खेतों में भेजा जाता है और इसको तब तक वाष्पीकृत किया जाता है जब तक कि उसका घनत्व 1.21 तक नहीं बढ़ जाता। इस स्थिति में कैल्शियम सल्फेट अवक्षेपित हो जाता है। इसके बाद इस सांद्रित नमक को तीसरे तालाब या खेत में भेजा जाता है। यहां नमक बड़े-बड़े मणिभों या क्रिस्टलों मे परिवतर्तित होकर नीचे तली पर बैठ जाता है। इस अवस्था मे घनत्व 1.26 हो जाता है। इस स्थिति में यदि बरसात आ जाती है तो सारी मेहनत बेकार हो जाती है।

तीसरे तालाब या खेत में वाष्पीकरण क्रिया को तब तक जारी रखा जाता है जब तक कि नमक की पर्याप्त परत ऊपर जमा नही

हो जाती। इसके बाद तालाब या खेत से पानी निकाल लिया जाता है तथा नमक को इकट्ठा कर लिया जाता है। इस कच्चे नमक को भारी मात्रा में साफ करके सुखाया जाता है तथा थैलों में बन्द किया जाता है। शुद्ध नमक प्राप्त करने के लिए इसका दोबारा से मणिभीकरण किया जाता है। आजकल कुछ कंपनियां तीन बार नमक को रिफाइण्ड करके पैक करके बेचती हैं।

ठंडे प्रदेशों में समुद्र के पानी से नमक प्राप्त करने के लिए एक और तरीका प्रयोग में लाया जाता है। समुद्र के पानी को ठंड से जमने के लिए छोड़ दिया जाता है। चूंकि पानी के जमने में नमक नहीं आ पाता है इसीलिए बिना जमे पानी में नमक की मात्रा बढ जाती है। इस पानी में जमी हुई बर्फ को अलग कर दिया जाता है और शेष पानी को फिर से जमने के लिए छोड़ दिया जाता है। यह क्रिया तब तक जारी रखी जाती है जब तक कि पानी में नमक की मात्रा काफी अधिक न हो जाए। इस नमकीन पानी को बनावटी गर्मी द्वारा वाष्पित किया जाता है और शुद्ध नमक प्राप्त कर लिया जाता है।

सागरों के अलावा नमक की खानें भी होती हैं। संसार में नमक की बहुत-सी खानें हैं। अकेले अमरीका में ही कन्सास, ओक्लाहोमा, टेक्सास और न्यूमैक्सिको के लगभग 1.75 लाख वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में नमक की बहुत-सी खानें हैं। यूराल पर्वत शृंखलाओं में भी नमक के अनेक भंडार हैं। जर्मनी की स्टासफर्ट नमक की खानें बहुत प्रसिद्ध हैं। इन खानों से भारी मात्रा में नमक प्राप्त किया जाता है।

समुद्र के पानी से पूरे संसार में लगभग 40 मीट्रिक टन नमक का उत्पादन किया जाता है। हमारे देश में यह लगभग 5 मीट्रिक टन है।

अध्याय 8

सागरों से पैट्रोलियम और गैस

पैट्रोलियम और गैस हमारे जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक हो गए हैं। पैट्रोलियम से प्राप्त पैट्रोल और डीज़ल से हमारे मोटरवाहन चलते हैं और प्राकृतिक गैस हमारे अनेक कार्यों में प्रयोग होती है।

पैट्रोलियम को हम तरल सोना कहते हैं क्योंकि आज की सभ्यता में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यदि गहराई से विचार किया जाए तो पैट्रोलियम सोने से भी अधिक उपयोगी है। हमारे उद्योग, यातायात, कृषि और दूसरे अनेक कार्य पैट्रोलियम और गैस से चलते हैं।

वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह परिणाम निकाले गए हैं कि जितना तेल महाद्वीपीय क्षेत्रों में है उतना ही तेल अपतटीय सागर क्षेत्रों में है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि महाद्वीपीय शेल्फों में 1000 अरब बैरल तेल होगा। अपतटीय क्षेत्रों में सबसे पहले सन् 1890 में पैट्रोलियम प्राप्त किया गया था। लुइसिआना की काडो झील में पिछली शताब्दी के आरम्भ में पैट्रोलियम के कुएं खोदे गए। उसके बाद सागरों से तेल प्राप्त करने का सिलसिला जारी हो गया। सन् 1945 में दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त हो जाने पर अपतटीय सागर के क्षेत्रों से तेल प्राप्त करने की खोज और भी तीव्र हो गई। सन् 1973 में ऊर्जा का विशाल संकट आ जाने पर समुद्रों से तेल प्राप्त करने के प्रयास और भी तेज हो गए। विश्व के सभी देश जो सागरों के पास हैं सागरों से तेल प्राप्त करने के तरीकों में जुट गए।

वैज्ञानिकों के प्रयासों के फलस्वरूप सागरों में अनेक तेल क्षेत्रों का पता लगाया गया है। मैक्सिको की खाड़ी में किनारों से लगभग 160 किलोमीटर अन्दर तेल के बहुत से कुओं की खुदाई की जा चुकी है। अपतटीय तेल के क्षेत्रों में कैलिफोरनिया के किनारों, अटलांटिक के ब्राजील और अफ्रीकी किनारों, फारस की खाड़ी, मलेशिया और इंडोनेशिया के सागरों और विश्व के समुद्री क्षेत्रों में तेल के विशाल भंडारों का पता लगाया जा चुका है।

सागरों से पैट्रोलियम प्राप्त करने का सबसे बड़ा अभियान उत्तरी सागर में चलाया गया। वहां पर कई कुएं 180 मीटर गहराई तक किनारों से 400 किलोमीटर अन्दर जाकर खोदे गए। आज संसार के अनेक सागरों से कच्चे तेल की विशाल मात्राएं प्राप्त की जा रही हैं।

हिन्द महासागर में स्वेज की खाड़ी, लाल सागर, ईरान की खाड़ी, अरब की खाड़ी, बंगाल की खाड़ी, सुमात्रा, बोर्निया, सारावाक और आस्ट्रेलिया के निकटवर्ती सागरों में तेल और प्राकृतिक गैस के क्षेत्रों के विशाल भंडार हैं। इस काम के लिए विशेष प्रकार के ड्रिलिन्गशिप प्रयोग किए जाते हैं।

हमारे देश के निकटवर्ती अरब सागर और बंगाल की खाड़ी में तेल और प्राकृतिक गैस के विशाल भंडार हैं। हमने खम्भात और बॉम्बे हाई से तेल और प्राकृतिक गैस प्राप्त करनी आरम्भ कर दी है। हमारे देश में तेल और प्राकृतिक गैस आयोग के आपरेशन लीग फ्राग के अन्तर्गत अल्याबेट द्वीप के तट पर 19 मार्च 1970 को पहला पैट्रोलियम का कुआं खोदा गया था। उसके एक वर्ष बाद उससे तेल निकलना आरम्भ हुआ यद्यपि इसमें आशा के अनुसार तेल नहीं निकला लेकिन फिर भी देश के लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

तेल और प्राकृतिक गैस के भंडारों का पता लगाने के लिए तेल और प्राकृतिक गैस आयोग ने बहुत से प्रयास किए। बम्बई तट से लगभग 160 किलोमीटर दूरी पर बॉम्बे हाई क्षेत्र में तेल और प्राकृतिक गैस के भारी भंडार मिले। बॉम्बे हाई क्षेत्र में कुएं खोदने का काम शुरू किया गया और सन् 1976 में पहले कुएं से तेल निकाला गया।

अब बॉम्बे हाई से पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस भारी मात्रा में प्राप्त की जा रही है। सन् 1984-85 में इस क्षेत्र से तीन करोड़ टन तेल निकाला गया, उसमें से 2.1 करोड़ टन तेल अपतटीय कुओं से प्राप्त किया गया।

छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान देश में तेल उत्पादन में 200 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस योजना के आरम्भ में देश में तेल का उत्पादन 37 प्रतिशत था जो योजना के अन्त में बढ़कर 73 प्रतिशत हो गया।

ऑयल इंडिया लिमिटेड और तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग को गोदावरी और कृष्णा नदियों के डेल्टाई सागरों में किए गए प्रयासो से अधिक सफलता न मिली।

सन् 1980 में नार्वे के जलयान पेलेरिन द्वारा की गई खुदाई से ऐसे कुएं का पता चला जिससे 600 बैरल तेल प्रतिदिन निकाला जाता था। सन् 1981 के आरम्भ में अमीरका से किराए पर लिए गए गैटिसबर्ग नामक समुद्री जहाज से कावेरी के मुहाने के निकट एक कुएं की खुदाई की गई जिससे 1500 बैरल तेल रोजाना प्राप्त होता था। आज भी देश के तटवर्ती सागरों में तेल की खोज करने के लिए तेल और प्राकृतिक गैस आयोग अधिक से अधिक जलयानों का प्रयोग कर रहा है। यह आयोग बड़ी मात्रा में प्लेटफार्म और रिग खोदने की युक्तियां प्राप्त कर रहा है।

इंग्लैंड के पास उत्तरी सागर से तेल के अतिरिक्त गैस भी काफी अधिक मात्रा में प्राप्त की जा रही है। यही कारण है कि इंग्लैंड मे कोयला गैस की जगह प्राकृतिक गैस का प्रयोग अधिक होता है। उत्तरी सागर की एक गैस रिग चित्र 8.1 में दिखाई गई है।

अपतटीय क्षेत्रों से तेल प्राप्त करने के लिए आधुनिक प्लेटफार्म, ड्रिलिंग रिग, शिप और दूसरे उपकरणों का विश्व के विकसित देशों द्वारा निर्माण किया जा रहा है।

अब हम जानना चाहेंगे कि अपतटीय क्षेत्रों में तेल प्राप्त करने के लिए छेद कैसे किए जाते हैं।

सागरों में तेल के कुएं खोदना जमीन में कुआं खोदने की तुलना

कम-से-कम 10 गुना महंगा काम है। सागरों में कुआं
सभी कर्मचारियों को पानी के जहाज या हैलीकॉप्टर
लाया जाता है। आर्कटिक और उत्तरी सागर जैसे क्षेत्रों मे
तूफानी बहाव से रिग नष्ट भी हो जाते हैं। आवश्य
सार सागरों से तेल प्राप्त करने का महत्व बढ़ता जा रहा
जैसे ऊर्जा संसाधनों की दिन-प्रतिदिन कमी होती ज
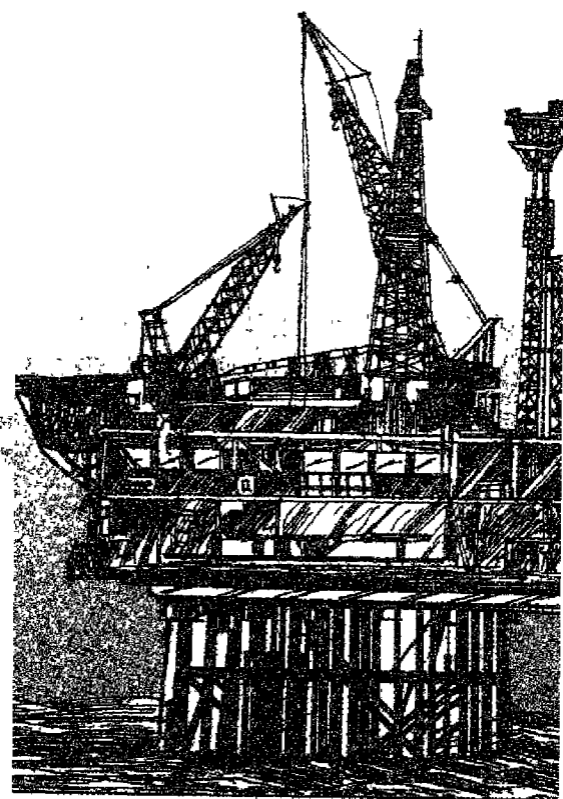
चित्र 8.1 : उत्तरी सागर की एक गैस रिग

तटीय सागरों से तेल प्राप्त करने के लिए छेद करना
करने के तरीकों से काफी मिलता-जुलता है। दोनों काम
वाली रिग अलग-अलग होती है। अपतटीय क्षेत्रों में द
लिए पांच तरीके प्रयोग में लाए जाते हैं।

(1) पहला तरीका—पहले तरीके में एक छोटा-सा प्लेटफार्म प्रयोग किया जाता है। इस प्लेटफार्म में डैरिक, कीचड़ इकट्ठा करने वाला उपकरण, छेद करने वाली मशीनें तथा काम करने वाले कारीगर होते है। मशीनों की सहायता से जहां तेल की संभावना होती है वहां पर छेद करके तेल प्राप्त किया जाता है।

(2) दूसरा तरीका—इस तरीके में स्थिर प्लेटफार्म प्रयोग किया जाता है। यह बहुत बड़े प्लेटफार्म होते हैं। अधिकांश स्थिर प्लेटफार्म उथले सागरों में प्रयोग किए जाते हैं। कभी-कभी इन प्लेटफार्मों को 300 मीटर से अधिक गहराई तक के छेद करने के लिए प्रयोग किया जाता है। इन प्लेटफार्मों के कई भाग होते हैं और इन्हें विशाल जलयानों द्वारा वांछित स्थान पर ले जाया जाता है। काम करने वाले लोग इसके पहले भाग को सागर की तली तक डुबाते हैं। यह भाग दूसरे प्लेटफार्म भागों के लिए आधार का काम करता है। एक ऐसे स्थिर प्लेटफार्म से 42 कुओं में छेद किए जा सकते हैं। जहां पर तेल और गैस की सम्भावना होती है वहीं पर इस प्लेटफार्म को फिक्स कर दिया जाता है।

(3) तीसरा तरीका—इस तरीके में चैकअप रिग प्रयोग में लाई जाती है। इसे भी उथले पानी में छेद करने के लिए प्रयोग किया जाता है। छेद करने वाले प्लेटफार्म स्टील की टांगों पर टिके होते हैं। ये टांगें सागर की तलहटी पर टिकी रहती हैं। प्लेटफार्म के ऊपर डैरिक और छेद करने के उपकरण लगे होते हैं। इस प्रकार की रिग को इच्छा अनुसार ऊपर-नीचे किया जा सकता है। उथले सागरों में ये रिग बहुत महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं।

(4) चौथा तरीका—इस तरीके में ड्रिलशिप प्रयोग किए जाते हैं। इनका उपयोग गहरे पानी में छेद करने के लिए किया जाता है। डैरिक और छेद करने के उपकरण जलयान के डैक पर लगे होते हैं। इसके निचले भाग में एक विशेष छेद होता है जिसमें से छेद करने वाले उपकरण को सागर की तली तक भेजा जाता है। दूसरे इंजन तथा कम्प्यूटर जलयान के छेद करने वाले स्थान पर रखते हैं।

(5) पांचवां तरीका—इस तरीके में पानी में डूबने वाले रिग प्रयोग

; जाते हैं। इन्हें अलग-अलग गहराइयों के लिए प्रयोग
इन रिगों की टांगों में हवा भरी होती है। जिसके कार
पानी में ऊपर तैरती रहती हैं। रिग को अपनी जग
: रस्सियों से बांधा जाता है।

चित्र 8.2 और 8.3 में चार प्रकार के रिग दिखाए ग
जान लेना जरूरी है कि सभी रिगों में कारीगरों के रह
ह होती है। खाने-पीने की सामग्री इन्हें हैलीकॉप्टरों अ
जों द्वारा पहुंचायी जाती है। कारीगरों की मदद के
:सबोट भी होती है जो सामान भेजने के लिए प्रयोग
सन् 1960 के दौरान अधिकांश ड्रिलिंग तटों से पचास
दूरी तक ही किया जाता था। जैसे-जैसे तेल प्राप्त कर
अनुसंधान बढ़ते गए वैसे ही वैसे छेद करने की बेहत
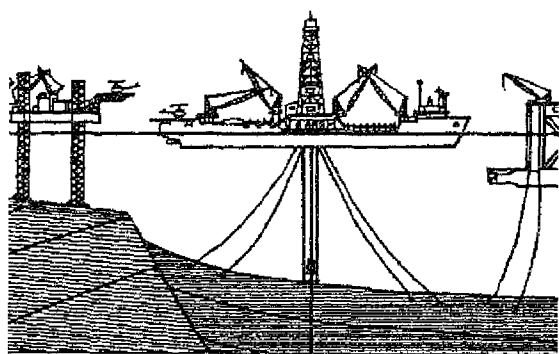
चित्र 8.2 : तीन प्रकार के रिग : 1. जैकअप रिग, 2. ड्रिल
3. सेमीमर्सीबल रिग
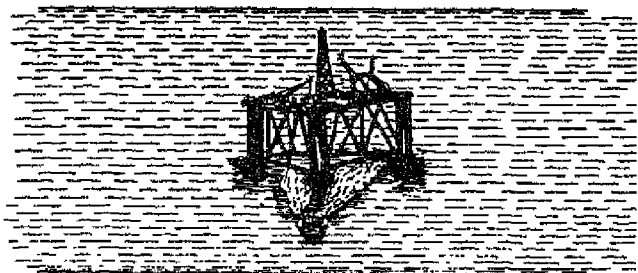
चित्र 8.3 : समुद्री रिग

का प्रयोग बढ़ता गया और तटों से समुद्र के अन्दर अधिक दूरी तक मानव के प्रयास पहुंचने लगे। सन् 1969 में तटों से 160 किलोमीटर की दूरी तक 400 मीटर गहरे बहुत से कुएं खोदे गए।

सन् 1970 के आरम्भ में एक विशेष पोत ग्लोमर चेलेन्जर द्वारा 4500 मीटर गहराई तक के कुएं खोदे गए। इस पोत की विशेषता यह थी कि यह विशेष प्रोपेलरों द्वारा अपनी स्थिति आगे-पीछे, ऊपर-नीचे करता रहता था। जैसे-जैसे समय बीतता गया है वैसे ही वैसे अनेक बेहतर मशीनों और तकनीकों का विकास होता रहा है। सागरों से पैट्रोलियम प्राप्त करने के लिए आज के वैज्ञानिक उन्नत किस्म के डैरिक, ड्रिलिंग मशीनें, रिग, ड्रिलिंगशिप, प्लेटफार्म और हैलीकॉप्टर बनाते आ रहे हैं। वह दिन दूर नहीं जब अपार तेल और गैस के भंडार हमें सागरों से अत्यधिक मात्रा में प्राप्त होने लगेंगे। निश्चय ही यह ऊर्जा संकट के समाधान की दिशा में एक बहुत बड़ा कदम होगा।

अध्याय 9

सागरों से रेडियोधर्मी तत्व

रेडियोधर्मी तत्व वे तत्व हैं जिनके नाभिकों से अदृश्य विकिरण पैदा होते रहते हैं। ये विकिरण हमें दिखाई तो नहीं देते लेकिन इनका प्रभाव देखा जा सकता है। रेडियोधर्मी पदार्थ दो प्रकार के होते हैं—

(1) प्राकृतिक रेडियोधर्मी तत्व तथा

(2) मानव निर्मित रेडियोधर्मी तत्व

फ्लोरीन-35, क्लोरीन-37, कार्बन-12 और कार्बन-14, प्राकृतिक रूप से मिलने वाले रेडियोधर्मी तत्व हैं। आज के वैज्ञानिक 300 से भी अधिक कृत्रिम रेडियोधर्मी पदार्थ बना चुके हैं। इन तत्वों के नाभिकों से रेडियोधर्मी किरणें निकलती हैं। ये किरणें हैं—एल्फा किरण, बीटा किरण और गामा किरण। चित्र 9.1 में रेडियोधर्मी पदार्थ से पैदा होने वाली एल्फा, बीटा और गामा किरणें दिखाई गई हैं।

रेडियोधर्मी तत्व पृथ्वी पर तो मिलते ही हैं लेकिन ये पदार्थ समुद्रो में भी मिलते हैं। इस अध्याय में समुद्र में मिलने वाले रेडियोधर्मी तत्वों का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

सागरों में मिलने वाले रेडियोधर्मी पदार्थ, उनका अर्धजीवनकाल, सागरों में मात्रा, अवसादी जमावों में मात्रा तथा उससे निकलने वाले विकिरणों का विवरण तालिका 9.1 में दिया गया है। इस तालिका

ड्योधर्मी तत्वो की सागरो मे कैसे उत्पत्ति हुई. इसके
–
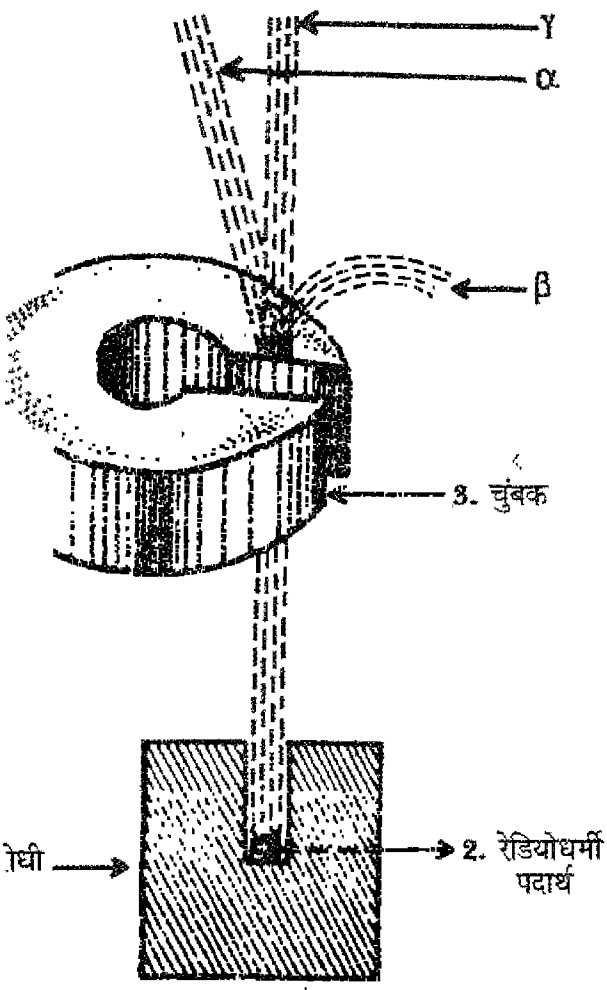
9.1 : रेडियोधर्मी तत्वों से निकलने वाले विकिरण

तालिका 9.1 : समुद्री रेडियोधर्मी तत्व

नाभिक	अर्धजीवन काल (वर्षों में)	सागर में मात्रा ग्राम प्रति लीटर	अवसादों में मात्रा ग्राम प्रति किलोग्राम	विकिरण
(1) ट्रिशियम	12.26	(6.7—33.3) $\times 10^{-10}$	—	बीटा कण
(2) बेरेलियम	2.5×10^{6}	1.4×10^{-13}	(0.3—3.0) $\times 10^{-10}$	इलैक्ट्रॉन कैप्चर
(3) कार्बन-14	5570	(2-3) $\times 10^{-14}$	(0.1-1.0) $\times 10^{-10}$	बीटाकण
(4) एल्यूमिनियम-26	7.4×10^{5}	—	(0.15-1.5) $\times 10^{-12}$	पोजीट्रॉन इलैक्ट्रॉन कैप्चर
(5) सिलिकॉन-32	500	5×10^{-19}	—	बीटाकण
(6) पोटाशियम-40	1.3×10^{9}	4.7×10^{-3}	(0.44-11-9) $\times 10^{-3}$	बीटाकण, इलैक्ट्रॉन कैप्चर
(7) रुबीडियम-87	4.7×10^{10}	3.4×10^{-5}	(2.3-5.7) $\times 10^{-3}$	बीटाकण
(8) स्ट्रोंशियम-90	28	(0.63-9.5) $\times 10^{-16}$	—	बीटाकण
(9) सीजियम-137	30	(0.52-2.6) $\times 10^{-14}$	—	बीटाकण
(10) रेडियम-226	1620	(3-16) $\times 10^{14}$	—	एल्फा कण
(11) थोरियम-228	1.91	1×10^{-18}	(0.3-40) $\times 10^{-9}$	बीटाकण
(12) थोरियम-230	75,200	9×10^{-15}	—	एल्फा कण
(13) थोरियम-232	1.41×10^{10}	(0.36-4.5) $\times 10^{-7}$	(1.30) $\times 10^{7}$	एल्फा कण
(14) प्रोटोएक्टीनियम 231,32	480	2×10^{-15}	(2-12) $\times 10^{-3}$	एल्फा कण
(15) यूरेनियम-234	2.48×10^{5}	(1.6-2.1) $\times 10^{-10}$	(5-150) $\times 10^{-9}$	एल्फा कण
(16) यूरेनियम-235	7.3×10^{8}	(1.9-2.5) $\times 10^{-9}$	(0.024-4.9) $\times 10^{6}$	एल्फा कण
			(0.028-58) $\times 10^{-4}$	एल्फा कण
(17) यूरेनियम-238	4.51×10^{9}	(2.7-3.4) $\times 10^{-6}$	(0.4-80) $\times 10^{-5}$	एल्फा कण

(1) पृथ्वी की उत्पत्ति के समय बनने वाले रेडियोधर्मी तत्व सागरों में चले गए और सागरों से रेडियोधर्मी तत्व प्राप्त होने लगे।

(2) वायुमंडल और अन्तरिक्ष कणों के साथ कॉस्मिक किरणों और सौर प्रोटोनों की क्रिया से बने रेडियोधर्मी तत्व सागर में पहुंचते रहते हैं।

द्वारा विखण्डन और सलयन क्रियाओ मे बने रेडियोधर्मी पहुंचते रहते हैं। इन तीनों तरीकों से पैदा होने वाले की उत्पत्ति के विषय में नीचे ब्यौरा दिया गया है। की उत्पत्ति में बनने वाले रेडियोधर्मी तत्व—जब हुई उसी समय कुछ दूसरे तत्वों का निर्माण हुआ। रेडियोधर्मी तत्व भी बने। इनमें से बनने वाले मुख्य यम-40, रुबीडियम-87, यूरेनियम-235, थोरियम-232 उत्पत्ति के बाद बहुत वर्षों तक तेज बरसात होती ानी के साथ और चट्टानों की अपरदन क्रिया में ये हुचते रहे। इन तत्वों में पोटाशियम और रुबीडियम क्षय हो जाता है। लेकिन यूरेनियम और थोरियम में क्षय होता है।

ोटाशियम में पोटाशियम-40 की 0.0118 प्रतिशत मात्रा के पानी में पोटाशियम की 0.033 प्रतिशत मात्रा

त्र 9.2 : समुद्री जल का गामा रे स्पैक्ट्रम

होती है। सागरों में रेडियोधर्मिता की मात्रा 90 प्रतिशत इसी तत्व के कारण है। इस तत्व के क्षय हो जाने के बाद आर्गन-40 का स्थिर नाभिक बन जाता है।

रुबीडियम-87 का आधा जीवनकाल बहुत अधिक है। इसकी मात्रा समुद्र के पानी में 120 माइक्रो ग्राम प्रतिलीटर है। समुद्री जल का यदि गामा रे स्पैक्ट्रम लिया जाए तो हमें इस स्पैक्ट्रम में पोटाशियम-40 की मात्रा सबसे अधिक मिलेगी। यह दोनों तत्व समुद्री अवसादों में भी मिलते हैं। चित्र 9.2 में समुद्री जल का गामा रे स्पैक्ट्रम दिखाया गया है। यह देखा गया है कि समुद्रों के पानी में यूरेनियम और थोरियम तत्वों की मात्रा काफी कम है। धरती से बहने वाला पानी जो समुद्रों में गिरता है यूरेनियम का ही मुख्य तत्व है। इन सभी तत्वों का वितरण समुद्रों के जल में लगभग एक ही जैसा है।

समुद्रों की अवसादी तली में यूरेनियम-235 और थोरियम-232 दोनों ही पाए जाते हैं और इनकी मात्रा वहां पर लगभग स्थिर है। वैज्ञानिकों ने समुद्र के पानी में इन तत्वों की मात्रा मापी है और इनके तत्वों के क्षय का भी अध्ययन किया है। यह देखा गया है कि सागरों के जल में थोरियम-228, थोरियम-230 और प्रोटोएक्टीनियम-231 भी उपस्थित हैं।

यूरेनियम श्रृंखला के क्षय में रेडियम-226 नामक आइसोटोप बनता है। यह बड़ी कम मात्रा में समुद्री पानी में पाया जाता है। समुद्र की तली में जमे हुए फास्फेटों में भी यूरेनियम पाया जाता है।

(2) कॉस्मिक किरणों द्वारा उत्पादित रेडियोधर्मी तत्व—कॉस्मिक किरणें या ब्रह्माण्ड किरणों में भारी संख्या में प्रोटोन होते हैं। ये प्रोटोन वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और आर्गन के नाभिकों से टकराते हैं और रेडियोधर्मी नाभिकों का निर्माण करते रहते हैं। वायुमण्डलीय ये नाभिक वर्षा के साथ-साथ धरती पर गिरते हैं। और पानी के साथ बहकर सागरों में पहुंचते रहते हैं। इस प्रकार रेडियोधर्मी पदार्थों की संख्या सागरों में बढ़ती रहती है।

कॉस्मिक किरणों के द्वारा मुख्य रूप से ट्रिशियम, बैरीलियम-7, बैरीलियम-10, कार्बन-14, सिलिकॉन-32 आदि रेडियोधर्मी तत्व बनते

हैं। ये सभी तत्व समुद्री पानी में पाये जाते हैं।

ट्रिशियम हाइड्रोजन का एक आइसोटोप है। यह ऑक्सइडों के रूप में सागर के पानी में मिलता है। ट्रिशियम का उत्पादन मुख्य रूप से कॉस्मिक किरण प्रोटोनों की ऑक्सीजन और नाइट्रोजन पर होने वाली क्रियाओं द्वारा होता है। इस तत्व का अर्धजीवनकाल काफी कम होता है।

वायुमंडल की नाइट्रोजन द्वारा न्यूट्रॉन कैप्चर के परिणामस्वरूप कार्बन-14 बनता है। कार्बन-14 के क्षय से नाइट्रोजन बनती है। कार्बन-14 के संयोग से जो कार्बनडाइऑक्साइड बनती है यह प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में पेड़-पौधों में चली जाती है। इसी की मात्रा के अनुसार पेड़-पौधों की उम्र ज्ञात की जाती है। विज्ञान की भाषा में इसे कार्बन डेटिंग कहते हैं।

वैज्ञानिकों ने यह गणना की है कि कार्बन-14 का 94 प्रतिशत सागरों के जल में है। 0.4 प्रतिशत अवसादी चट्टानों में है और 5.6 प्रतिशत वायुमंडल और जीवमंडल में है।

बेरेलियम-10 मुख्य रूप से अवसादी चट्टानों से मिलता है। बेरेलियम के कुछ नमूने प्रशान्त महासागर में भी मिले हैं।

जब कॉस्मिक किरणें आर्गन के परमाणुओं से क्रिया करती हैं तो इस क्रिया के फलस्वरूप एल्यूमिनियम-26 बनता है। एल्यूमिनियम-26 अवसादी चट्टानों में भी पाया जाता है। बाहरी अंतरिक्षों से आने वाली धूल में एल्यूमिनियम-26 सागरों में गिरता रहता है। इस प्रकार सागरों में एल्यूमिनियम-26 की मात्रा बढ़ती रहती है।

आर्गन के साथ कॉस्मिक किरणों की क्रिया से सिलिकॉन-32 बनता है।

(3) कृत्रिम विधियों द्वारा रेडियोधर्मी नाभिकों का बनना—सारे संसार में अनेक नाभिकीय परीक्षण किए गए हैं। बहुत सारे परमाणु विद्युतघर संसार में काम कर रहे हैं। विखण्डन और संलयन नाभिकीय क्रियाओं द्वारा पिछले 70 वर्षों से रेडियोधर्मी तत्व बनते आ रहे हैं। परीक्षणों का मलबा जो धरती और सागरों में गिरता है उससे बहुत सारे रेडियोधर्मी तत्व सागरों में पहुंच जाते हैं। विश्व के अनेक देशों

ने सागरों में जो परीक्षण किए हैं उससे बहुत सारे रेडियोधर्मी तत्व सागरों में पहुंच गए हैं। जो रेडियोधर्मी पदार्थ सागरों में दफनाए गए हैं उनके बर्तनों के टूटने से बहुत से इन तत्वों की मात्रा सागरों में जा पहुंची है।

नाभिकीय विखण्डन की क्रिया से लगभग 200 से भी अधिक रेडियोधर्मी पदार्थ सागरों में जा पहुंचे हैं। इनमें मुख्य रेडियोधर्मी तत्व है--स्ट्रोन्शियम-89, स्ट्रोन्शियम-90, इट्रियम-91, जिरकोनियम-95, रूथेनियम-103, सीजियम-137, सीजियम-141, प्रोमेथियम-147 आदि। इनसे भी दूसरे रेडियोधर्मी पदार्थ जैसे कार्बन-14, फास्फोरस-32, सल्फर-35, क्रोमियम-51, मैगनीज-54, लोहा-55 आदि बनते रहते हैं।

मनुष्य के कार्यकलापों से ये रेडियोधर्मी तत्व सागरों में पहुंचते रहते हैं। इनकी प्रतिशत मात्राओं का विवरण तालिका 9.1 में दिया जा चुका है।

अधिकांश रेडियोधर्मी तत्व जीवित प्राणियों के लिए घातक होते है। आज का मानव रेडियोधर्मी पदार्थों को कृषि, उद्योग और चिकित्सा विज्ञान में रोगों का पता लगाने और इलाज करने में प्रयोग कर रहा है। रेडियोधर्मी तत्व सागर विज्ञान में बहुत ही महत्व के हैं। इसका विवरण नीचे दिया गया है।

सागर विज्ञान में रेडियोधर्मी तत्वों का महत्व—प्राकृतिक रूप से मिलने वाले और मानव द्वारा बनाए गए रेडियोधर्मी पदार्थों ने सागरों के और धरती के शुरू के इतिहास को समझने के विषय में बड़ी मदद पहुंचायी है।

अलग-अलग रेडियोधर्मी तत्व जो समुद्र के जल में घुले रहते हैं उनके वितरण के आधार पर समुद्री धाराओं के रास्ते से सम्बन्धित अध्ययनों का भारी ज्ञान प्राप्त हुआ है। किसी समुद्री धारा में एक डाई के साथ रेडियोआयोडीन-131 को मिला दिया जाता है। जगह-जगह पर रेडियोधर्मी आयोडीन की डिटेक्टरों द्वारा रेडियोधर्मिता मापते हैं। इसके आधार पर बहाव की दिशा और बहाव के वेग का ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

सागरों के किनारों पर बालू की गति का अध्ययन रेडियोधर्मी

जीनॉन-133, बेरियम-लेन्थानम्-140 या आयोडीन-131 के द्वारा किया जाता है। नदियों में तलछट के बहाव के वेग का अध्ययन करने के लिए भी रेडियोधर्मी समस्थानिकों की मदद ली जाती है।

उम्र निकालने के लिए कार्बन-14 द्वारा डेटिंग की जाती है इससे चट्टानों की उम्र का पता लग जाता है। ये चट्टानें कब बनीं, इनमे मिलने वाले अवशेष उम्र का सही अनुमान देते हैं।

मानव द्वारा वायुमण्डल में किए गए परमाणु बमों के परीक्षणों से जो रेडियोधर्मी तत्व सागरों में पहुंचते हैं उनसे ट्रेस अध्ययनों में भारी मदद मिलती है। इन अध्ययनों में कार्बन-14, ट्रिशियम, स्ट्रोन्शियम-90, सीजियम-137 बहुत ही कारगर सिद्ध हुए हैं।

कार्बन-14 द्वारा समुद्री तलहटी में बहुत से पदार्थों की उम्र ज्ञात करने में बड़ी मदद मिली है। इस उम्र से उनके बनने की अवधि का ज्ञान प्राप्त हुआ है। यूरेनियम की रेडियोधर्मिता द्वारा कुछ पुरानी चट्टानों की उम्र ज्ञात करने में काफी मदद मिली है। लम्बी उम्र ज्ञात करने में ये आंकड़े बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। कुछ लाख वर्षो की उम्र ज्ञात करने में एल्यूमिनियम-26 और बेरिलियम-10 के द्वारा उम्र ज्ञात की गई है। इस प्रकार रेडियोधर्मी पदार्थों से सागरों की गुत्थियां ही नहीं सुलझाई गईं बल्कि इन पदार्थों को मानव हितों में भी प्रयोग किया जा रहा है।

अध्याय 10

सागरों से पीने का पानी

संसार की बढ़ती हुई आबादी को देखकर ऐसा लगता है कि पीने वाले पानी की समस्याएं दिन-प्रतिदिन बढ़ती जाएंगी। पिछले 50 वर्षों में विश्व की आबादी बड़ी तेजी से बढ़ी है। सन् 1930 में विश्व की आबादी 2 अरब थी। सन् 1960 में यह आबादी 3 अरब हो गई और देखते ही देखते सन् 1975 में विश्व की आबादी 4 अरब हो गई। सन् 1986 में यही आबादी 5 अरब हो गई। ऐसा अनुमान है कि सन् 2080 तक यही आबादी 15 अरब हो जाएगी। जिस तेजी से विश्व की आबादी बढ़ रही है उसे देखकर ऐसा लगता है कि दुनिया में पीने के पानी की कमी हो जाएगी।

जनसंख्या बढ़ने की इस दर को देखकर मानव खाद्य आपूर्ति के लिए कृषि और उद्योगों में नए-नए तरीके लगा रहा है। पानी की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए उसका डर दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। आज के मानव की जल आवश्यकताएं भूमिगत जल और प्राकृतिक जल से पूरी तो हो रही हैं लेकिन पीने के पानी की समस्याएं दिन-प्रतिदिन जटिल से जटिलतर होती जा रही हैं।

पीने के पानी की आवश्यकताओं को तेजी से बढ़ते हुए देखकर आज का मानव सागर के खारे पानी को पीने के पानी में बदलने का प्रयास कर रहा है। उसका विचार है कि इससे आने वाले वर्षों मे मानव की जल आवश्यकताएं पूरी हो सकें।

सागरों के नमकीन पानी को किस प्रकार पीने योग्य बनाया जाए

इस विषय मे सारी दुनिया के समुद्री वैज्ञानिक और इजीनियर तरीके विकसित करने मे लगे हुए है। सागरो के जल को पीने योग्य बनाने में किए गए अनुसंधानों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि कम मूल्य पर सागरों के पानी को सिंचाई योग्य बनाना तो कठिन कार्य है लेकिन पीने योग्य बनाना सम्भव हो सकेगा। उद्योगों की आपूर्ति के लिए भी सागरों का खारा पानी उपयुक्त बनाया जा सकता है। संसार के अनेक देशों में खारे पानी को पेय जल में परिवर्तित करने में बहुत से संयंत्र कार्यरत हैं।

फारस की खाड़ी में कुवैत नामक स्थान पर एक ऐसा संयंत्र लगाया गया है जो एक करोड़ 90 लाख लीटर पानी प्रतिदिन पेयजल के रूप में बना रहा है। मंडालय बीच कैलीफोर्निया का एक जाना-माना बीच है। वहां पर एक विद्युत संयंत्र कार्यरत है जिससे 380 हजार लीटर पीने का पानी आसवित होता है। सऊदी अरबिया या जिब्रालटर और बरमुडा में कई ऐसे संयंत्र हैं जो पीने का पानी निर्माण करने का काम करते हैं। इंगलिश चैनल के गुरनसे टापू पर एक ऐसा संयंत्र लगाया गया है जो वर्षा कम होने पर खेतों के लिए जल की आवश्यकताएं पूरी करता है। वैज्ञानिक गणनाओं के अनुसार बिजली के 208 किलोवाट आवर्स से 4000 लीटर समुद्र का पानी पीने योग्य जल में बदला जा सकता है। अब तक जितने भी संयंत्र लगाए गए हैं उनमें विद्युत ऊर्जा की इससे अधिक खपत होती है। आज के वैज्ञानिक चलन में ऐसी पांच विधियां हैं जिन्हें खारे पानी को पेय जल में बदलने के लिए प्रयोग किया जाता है।

(1) आसवन या वाष्पीकरण
(2) विद्युत अपघटन
(3) हिमीकरण
(4) उत्क्रम परासरण
(5) बहुचरणीय स्फुर आसवन

(1) आसवन या वाष्पीकरण—इस तरीके से समुद्र के पानी को पीने योग्य बनाना बहुत पुराने समय से चलता आ रहा है। आसवन मे पानी को उबालकर भाप बनाई जाती है और भाप को ठंडा करके

पानी में बदला जाता है। यह पानी नमकरहित हो जाता है। यह पानी खारा नहीं रहता और पीने योग्य हो जाता है।

बहुत समय पहले जूलियस सीजर ने भूमध्य सागर के पानी को सूरज की गर्मी से वाष्प में बदलकर अपनी सेनाओं के लिए आसवित किया था।

आसवन की विधि में सागर के पानी को उबाला जाता है और भाप को ठंडा करके पीने योग्य जल में बदला जाता है। आजकल के अधिकतर संयंत्र किसी न किसी रूप में आसवन के तरीके को प्रयोग में लाते हैं। सागर के पानी को उबालने के लिए या तो सूरज की गर्मी प्रयोग में लाई जाती है या परमाणु ऊर्जा को प्रयोग में लाया जाता है। इस विधि में पानी वाष्पित होता रहता है और पानी में घुले हुए लवण नीचे रह जाते हैं। यह विधि काफी लाभदायक सिद्ध हुई है।

(2) विद्युत अपघटन—विद्युत अपघटन ऐसा तरीका है जिसमें सागर के पानी में विद्युत धारा गुजारी जाती है। चूंकि समुद्र के पानी मे लवण घुले होते हैं इसीलिए उसमें से विद्युत धारा आसानी से गुजर जाती है। लवण घुला हुआ पानी विद्युत का सुचालक होता है। जब लवण घुले पानी में बिजली गुजारी जाती है तो पानी के धनात्मक आयन कैथोड की तरफ जाने लगते हैं तथा ऋणात्मक आयन एनोड की ओर गति करने लगते हैं।

चूंकि समुद्र के पानी में नमक अधिक होता है और नमक को सोडियम क्लोराइड कहते हैं इसीलिए बिजली गुजारने पर सोडियम के आयन जो धनात्मक होते हैं कैथोड की ओर जाते हैं और क्लोराइड के आयन जो ऋणात्मक होते हैं वे एनोड की ओर जाते हैं। इस प्रकार समुद्र के पानी से लवण अलग हो जाता है।

खारे पानी में पारगम्य झिल्ली लगा दी जाती है। इस झिल्ली के छेद इतने छोटे होते हैं जो केवल एक ही प्रकार के आयनों को आर-पार जाने देते हैं। वास्तव में यह झिल्लियां एक छन्ने का काम करती हैं। इस प्रकार समुद्री खारा पानी पीने योग्य बन जाता है।

(3) हिमीकरण—इस विधि में नमक के पानी को ठंडा करके

बर्फ में बदला जाता है। हिमीकरण की क्रिया में शुद्ध पानी तो जमकर बर्फ के मणिभों में बदल जाता है और नमक अलग रह जाता है। शुद्ध पानी को जो मणिभों के रूप में होता है घोल से अलग कर लिया जाता है। इस पानी को हल्की गर्मी देकर पिघला लिया जाता है। यह पिघला हुआ पानी नमकरहित होता है और पीने योग्य होता है।

(4) उत्क्रम परासरण—इस विधि में पतली झिल्लियों से पानी को छाना जाता है। इन झिल्लियों में बहुत छोटे छेद होते हैं। ये इतने बारीक छेद होते हैं कि इनसे केवल पानी ही आर-पार निकल सकता है। लवण के कण आर-पार नहीं निकल सकते। ये झिल्लियां सैल्यूलोज एसीटेट की बनी होती हैं। इन झिल्लियों से छना हुआ पानी नमकरहित हो जाता है और पीने योग्य हो जाता है। इस विधि को उत्क्रम परासरण (Reverse Osmosis) कहते हैं। यह विधि आजकल सीवेज जल के उपचार के लिए प्रयोग हो रही है। अन्य विधियों की तुलना में यह विधि सस्ती है।

(5) बहुचरणीय स्फुर आसवन—इस विधि में कई चरणों में आसवन क्रिया करके खारा पानी पीने योग्य बनाया जाता है। अंग्रेजी भाषा में इसे Multistage Flesh Distillation कहते हैं। इस विधि में पानी को भाप द्वारा गर्म किया जाता है तथा इसके चारों ओर दाब कम किया जाता है। इस पानी को अनेक चैम्बरों में से गुजारा जाता है। हर चैम्बर का दाब कम होता जाता है। इससे पानी वाष्पित होता जाता है और अन्त में संघनित होकर द्रव में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार से पानी लवणरहित बन जाता है। चित्र 10.1 में इस विधि को प्रयोग में लाने वाला संयंत्र दिखाया गया है।

इस प्रकार का संयंत्र आबू-दाबी में काम कर रहा है जो रोजाना 90 लाख लीटर समुद्री पानी को पीने योग्य पानी में बदल देता है।

दुनिया बहुत बड़ी है और पीने के पानी की समस्या भी एक विशाल समस्या है। आज संसार में अनेक प्लान्ट लगाए जा चुके है जो समुद्री जल को पीने योग्य बनाकर मानव जाति की सेवा कर रहे हैं। ऐसा सम्भव है कि आने वाले वर्षों में समुद्र के जल से पीने

योग्य जल बनाने के सस्ते और बेहतर साधन विकसित हो जाएं और बढ़ती हुई जनसंख्या को पानी दे सकें।
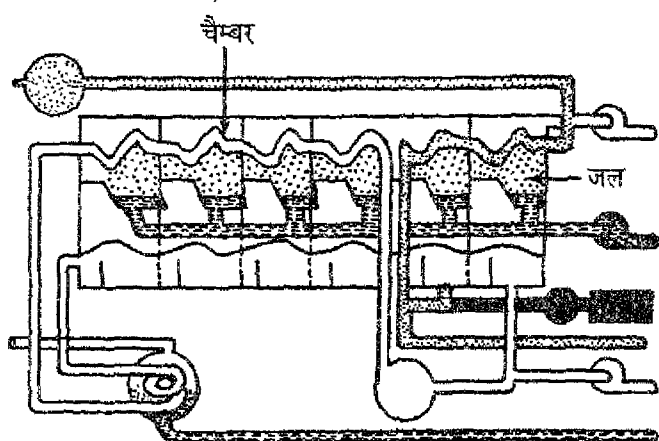
चित्र 10.1 : बहुचरणीय स्फुर आसवन द्वारा पेयजल बनाना

हमारे देश का केन्द्रीय लवण और समुद्री रसायन अनुसंधान संस्थान, जो भावनगर में स्थित है, वह सौर ऊर्जा द्वारा समुद्री पानी को पीने योग्य बनाकर योगदान दे रहा है। इसी संस्थान में प्रतिलोम प्रसारण द्वारा समुद्री पानी को लवणरहित बनाने का कार्य किया जा रहा है। ऐसा ही एक संयंत्र तमिलनाडु के पुषागरम गांव में प्रतिदिन 50 हजार लीटर पीने का पानी समुद्र के खारे पानी से तैयार करता है। वह दिन दूर नहीं जब आने वाले वर्षों में और भी संयंत्र लगाए जाएंगे जो खारे पानी को पीने योग्य बनाने में सक्षम होंगे।

अध्याय 11

सागरों से ऊर्जा

जैसे-जैसे धरती पर मानव की आबादी में वृद्धि हो रही है वैसे ही वैसे ऊर्जा की आवश्यकताएं बढ़ती जा रही हैं। हमारे सागर ऊर्जा के विशाल भंडार हैं। इनमें कभी भी समाप्त न होने वाले ऊर्जा के भण्डार हैं।

मानव सागरों से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए प्राचीनकाल से ही विचारविमग्न रहा है लेकिन कुछ वर्षों से ही उसे सागरों से ऊर्जा प्राप्त करने में सफलता मिली है। इस अध्याय में सागरों के ऊर्जा स्रोतों और उनसे ऊर्जा प्राप्त करने के तरीकों का विवरण दिया गया है।

(1) परमाणु ऊर्जा के ईंधन स्रोत--परमाणु ऊर्जा प्राप्त करने के दो तरीके हैं। एक तरीका है नाभिकीय विखण्डन और दूसरा तरीका है नाभिकीय संलयन। नाभिकीय विखण्डन की क्रिया में यूरेनियम जैसे बड़े नाभिकों को न्यूट्रानों से तोड़कर ऊर्जा पैदा की जाती है। जबकि नाभिकीय संलयन में हाइड्रोजन और ड्यूटेरियम के नाभिकों को संगलित करके यानी जोड़ करके ऊर्जा पैदा की जाती है।

आज सारे संसार में पैदा होने वाली कुल विद्युत ऊर्जा का दस प्रतिशत भाग परमाणु विद्युत केन्द्रों से पूरा किया जाता है। हमारे देश में तारापुर, नरौरा, रानासागर बांध, ट्रोम्बे आदि में अनेक नाभिकीय रिएक्टर हैं जो यूरेनियम और प्लूटोनियम जैसे तत्वों को विखण्डन के लिए प्रयोग करके ऊर्जा बनाते हैं। हमारे सागरों में यूरेनियम और

थोरियम के विशाल भण्डार है इन पदार्थो को सागरो से प्राप्त करके ईधन के रूप में विद्युत ऊर्जा के उत्पादन के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

अभी तक नाभिकीय संलयन क्रियाओं पर आधारित केन्द्र नही बन पाए हैं लेकिन उम्मीद की जाती है कि संलयन पर काम करने वाले नाभिकीय रिएक्टर विश्व में बनने लगेंगे। ऐसा हो सकता है कि भविष्य में हमें संलयन क्रियाओं द्वारा ही ऊर्जा प्राप्त हो। सूर्य और दूसरे तारों में संलयन क्रियाएं होती हैं जिनसे ऊर्जा पैदा होती है। इन क्रियाओं से पैदा होने वाली ऊर्जा में रेडियोधर्मिता का कोई खतरा नहीं होता है जबकि विखण्डन क्रियाओं में रेडियोधर्मी पदार्थ पैदा होते हैं। रेडियोधर्मी पदार्थ जीवित प्राणियों के लिए बहुत घातक होते हैं। संलयन या फ्यूजन क्रियाओं में हाइड्रोजन और ड्यूटेरियम की आवश्यकता होती है। हाइड्रोजन में एक प्रोटोन होता है। ड्यूटेरियम मे एक प्रोटोन और एक न्यूट्रान होता है। हाइड्रोजन का एक समस्थानिक ट्रिशियम होता है जिसमें एक प्रोटोन और दो न्यूट्रान होते है। ड्युटेरियम और ट्रिशियम को संगलित करके विशाल मात्रा में विद्युत ऊर्जा पैदा की जा सकती है।

सागरों के पानी में ड्युटेरियम के असीमित भण्डार हैं। ड्युटेरियम को गुरु हाइड्रोजन भी कहते हैं। यह देखा गया है कि हाइड्रोजन के 6500 परमाणुओं में एक परमाणु ड्युटेरियम का होता है। ऐसा अनुमान है कि जब तक सूर्य में संलयन क्रियाएं चलती रहेंगी तब तक सागरों से प्राप्त ड्यूटेरियम को धरती पर संलयन क्रियाओं के लिए प्रयोग किया जा सकेगा। वैज्ञानिक आंकड़ों के अनुसार धरती के सागरों में 100 क्विन्टीलियन ग्राम ड्यूटेरियम है जो कई लाख वर्षो तक समाप्त नहीं होगा। चित्र 11.1 में हाइड्रोजन के तीन आइसोटोप दिखाए गए हैं। विश्व का सबसे पहला संलयन रिएक्टर रूस का टॉम-माक था। इस रिएक्टर में जनवरी सन् 1982 में संलयन क्रिया सम्पन्न करके काफी हद तक सफलता प्राप्त की गई है। आज विश्व के कई देश संलयन क्रियाएं सम्पन्न करने का प्रयास कर रहे है। अमरीका के वैज्ञानिक एलमोवम्पी टॉरस नामक संलयन रिएक्टर बनाने
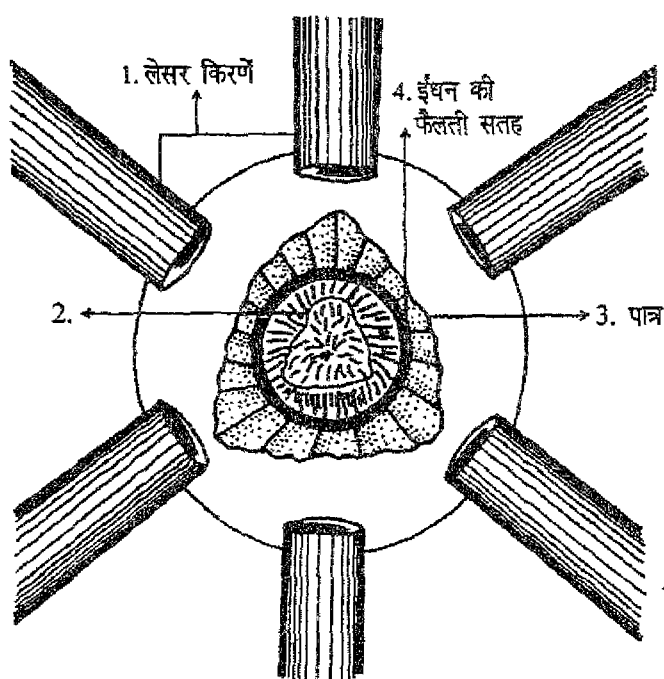
चित्र 11.2 : लेसर द्वारा संलयन

प्रक्रिया है। ज्वारों के दौरान पानी की विशाल लहरें ऊपर उठती हैं और नीचे गिरती हैं। पानी की लहरों का ऊपर उठना ज्वार कहलाता है और नीचे गिरना भाटा कहलाता है। इस प्रक्रिया में स्थितिज ऊर्जा का विशाल भण्डार होता है।

संसार के कई ऐसे स्थान हैं जहां पर समुद्री ज्वारीय शक्ति द्वारा विद्युत का उत्पादन किया जा रहा है। यूरोप के कई स्थानों पर ज्वारीय शक्ति से विद्युत उत्पादन किया जा रहा है। ज्वारीय बेरियन और सागर के बीच बांध बनाकर ज्वारीय लहरों से बिजली पैदा की जाती है। ज्वारीय शक्ति को मानव, सदियों से पनचक्की चलाने में प्रयोग करता आ रहा है। इन चक्कियों से गेहूं और मसाला पीसना एक प्रचलित काम रहा है।

ज्वारीय शक्ति से बिजली पैदा करने के लिए कनाडा की सीमा पर फन्डी की खाड़ी में 2.5 मैगावाट शक्ति का विद्युत उत्पादन केन्द्र बनाने का कार्य सन् 1955 से चल रहा है। कुछ कठिनाइयों के कारण

त्र में रोक दिया गया था। विश्व का पहला बिजलीघर
ो के मुहाने पर सन् 1966 में बनाया गया था। यह
1.3 में दिखाया गया है।
गदन क्षमता 10,000 किलोवाट है और यह 35
द्युत निर्माण करता है। इससे विद्युत प्राप्त करने के
ने पर एक किनारे से दूसरे किनारे तक बनाए गए
रेटर लगाए गए हैं। ये जेनरेटर सुरंगों में लगाए गए
रान जब पानी सागर की सतह से ऊपर उठता है
ते है। ज्वार के उतरते समय पानी की सतह नीची
स समय इकट्ठे किए गए पानी को छोड़कर टर्बाइन
।
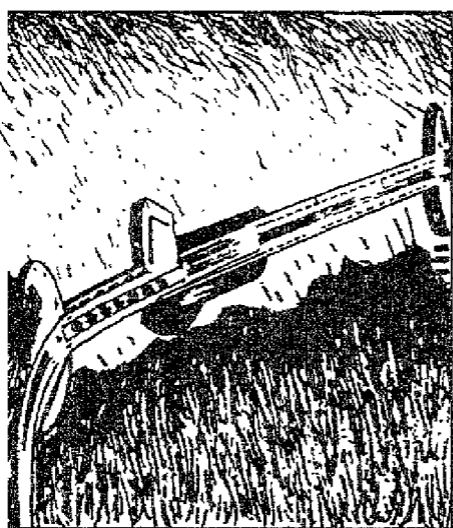
: रेन्स नदी के मुहाने पर बना ज्वारीय विद्युतघर

जाता है कि भविष्य में ज्वारीय ऊर्जा से बिजली
ो ज्वारों के बीच में ऊर्जा भण्डारण की समस्या पैदा
र के बहाव का उपयोग सम्पीड़कों (Compressor)
लिए किया जाएगा। ये सम्पीड़क सम्पीड़ित वायु को
कक्षों में भेजेंगे। इस संचित वायु को बिजली संकट
र्बाइन जेनरेटरों को चलाने के लिए प्रयोग में लाया

जाएगा।

फ्रांस में ज्वारीय शक्ति से चलने वाला एक विद्युत उत्पादन केन्द्र है जो 240 हजार किलोवाट विद्युत का उत्पादन कर रहा है। इसकी दक्षता 25 प्रतिशत है। इसी के आधार पर फ्रांस में एक छोटा-सा विद्युत उत्पादन केन्द्र बनाया गया है जो 400 किलोवाट विद्युत उत्पादन करता है। संसार के और भी कई देशों में ज्वारीय शक्ति से बिजली बनाने की योजनाएं बनाई जा रही हैं। इंग्लैंड में भी ज्वारीय ऊर्जा से विद्युत उत्पादन के कई कार्यक्रम चल रहे हैं।

(3) तापमान अन्तर से विद्युत उत्पादन—यह देखा गया है कि समुद्र के पानी की अलग-अलग गहराइयों में तापमान एक जैसा नहीं होता है। सूरज से आने वाली किरणें समुद्र के पानी की ऊपरी परतो तक ही अधिक अवशोषित होती हैं, इससे समुद्र के पानी की सतह का तापमान बढ़ जाता है और गहरी परतों में तुलनात्मक तरीके से तापमान अधिक नहीं बढ़ता है। यह देखा गया है कि ऊष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में सागर के पानी की सतह का तापमान 25 से 29 डिग्री सेल्सियस तक रहता है। सागर के पानी की 1000 मीटर गहराई पर जल का तापमान 6 डिग्री सेल्सियस होता है। तापमान के इसी अन्तर को प्रयोग में लाकर विद्युत उत्पादन का कार्य किया जाता है। इस क्रिया को हम "सागर ऊष्मा ऊर्जा रूपान्तरण" (Ocean Thermal energy conversion OTEC) कहते हैं। प्रचलित भाषा में इस क्रिया को ओटेक कहते हैं। चित्र 11.4 में एक ओटेक संयंत्र दिखाया गया है।

समुद्री जल के विभिन्न स्तरों के तापमान अन्तर को प्रयोग
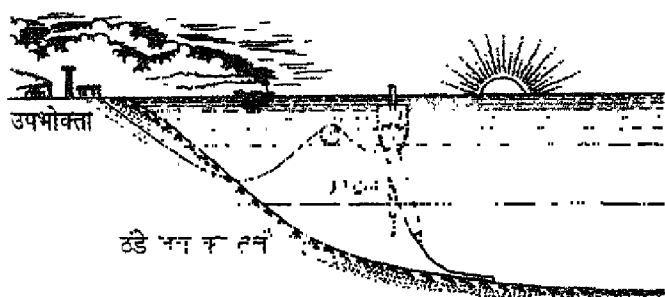
चित्र 11.4 : ओटेक संयंत्र की रूपरेखा

मे लाकर विद्युत बनाने का कार्यक्रम बहुत दिनो से चल रहा है। सबसे पहला प्रयास फ्रांस के जाने-माने वैज्ञानिक आसेन दा आर्सोन्वल ने सन् 1881 में किया था। उसके बाद 1920 के दशक के दौरान जॉर्ज क्लॉड ने भूमध्य सागर में एक नाव का प्रयोग किया और पहली बार इस तकनीक की सफलता को प्रदर्शित किया। सन् 1930 में उन्होंने क्यूबा की मतांजस खाड़ी में एक बिजलीघर बनाया लेकिन दुर्भाग्यवश द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद यह नष्ट हो गया। वहां पर फ्रांस की सरकार ने "एनजीदे सी" नामक सागर से ऊर्जा बनाने का एक प्रोजेक्ट चलाया। इस प्रोजेक्ट को ऊर्जा रूपान्तरण के लिए आज भी प्रयोग किया जा रहा है।

क्लॉड के प्रयोगों पर 30 वर्ष तक कोई ध्यान नहीं दिया गया लेकिन ऊर्जा की कमी ने यूरोप के लोगों का ध्यान फिर इस ओर आकर्षित किया। सन् 1960 के दशक में अमरीका के 2 वैज्ञानिक हिलबर्ट एंडरसन और उनके पुत्र जेम्स एंडरसन ने ओटेक विधि पर फिर से कार्य करना आरम्भ किया। उन्होंने क्लॉड के यंत्रों में काफी सुधार किए और उनकी क्षमता बढ़ाकर उन्हें इस योग्य बना दिया कि उनसे विद्युत उत्पादन करके लोगों को दिखाया जा सके।

ओटेक संयंत्र में भौतिक शास्त्रियों की दृष्टि से एक ऊष्मा इंजन प्रयोग होता है। उस ऊष्मा इंजन का सिद्धान्त सरल है। सिद्धान्तरूप से यह विधि ऐसी ही है जैसी ताप विद्युतघरों में प्रयोग होती है। ओटेक संयंत्र में सागर के जल से ऊष्मा प्राप्त की जाती है और इसमें कम क्वथनांक वाला द्रव अमोनिया या प्रोपेन प्रयोग किया जाता है। यह पदार्थ एक ऐसी बन्द नली में भर दिए जाते हैं जो गुनगुने पानी के क्षेत्र में स्थित होती हैं। इस पानी की ऊष्मा कार्यकारी तरल को वाष्पित करती है। इस वाष्प को ठंडे पानी के क्षेत्र में लाया जाता है। जहां वह दोबारा से द्रव में बदल जाती है। इस चक्र में वाष्प को टर्बाइन से गुजारा जाता है जिससे जेनरेटर चलता है। टर्बाइन से निकलने वाली वाष्प को ठंडे पानी के क्षेत्र में भेज दिया जाता है जहां वह द्रव में बदल दी जाती है। इस द्रव को पम्प द्वारा एक बॉयलर वाष्पक में भेज दिया जाता है।

इस संयंत्र की कार्यक्षमता जल स्तरों के तापमान के अन्तर पर निर्भर करती है। तापमान अन्तर जितना अधिक होता है संयंत्र की क्षमता भी उतनी ही अधिक होती है। एक मानव द्वारा काम करने वाले ओटेक संयंत्र की क्षमता जो 26 डिग्री सेंटीग्रेट के सतह वाले पानी और 6 डिग्री सेन्टीग्रेट गहरे जल पर कार्य कर रहा है उसकी क्षमता लगभग 6 प्रतिशत होनी चाहिए। वास्तव में वह 2 से 3 प्रतिशत होती है। बिजली बनाने वाले प्रचलित संयंत्रों की तुलना में यह बहुत कम है। फिर भी ओटेक संयंत्र दूसरे संयंत्रों की तुलना में बहुत सस्ते पडेगे क्योंकि उनके लिए सागर के जल से विशाल मात्रा में ऊष्मा प्राप्त की जा सकेगी।

ओटेक संयंत्र खासतौर से दो प्रकार के होते हैं। एक प्रकार के संयंत्रों में बन्द चक्र होता है और दूसरों में खुला चक्र होता है। बन्द चक्रों वाले संयंत्र बेहतर होते हैं क्योंकि उनकी क्षमता अधिक होती है। इनमें द्रव को बार-बार वाष्पीकृत किया जाता है और वाष्प को संघनित किया जाता है।

खुले चक्र वाले संयंत्रों में जल का दाब कम करके उसे उबालकर भाप पैदा की जाती है। इस विधि में काम आने वाले जल को एक बार प्रयोग करके दोबारा प्रयोग नहीं किया जा सकता परन्तु बाई प्रोडक्ट के रूप में हमें भारी मात्रा में मीठा जल प्राप्त होता है।

इस संयंत्र में लगभग 12 मीटर व्यास का समुद्र में तैरता हुआ कई सौ मीटर गहराई तक फैला हुआ वृत्ताकार चबूतरा होता है। उसमे गहरे सागर से ठण्डा पानी लाने वाली 15 मीटर व्यास की 1000 से 2000 मीटर लम्बी नलियां लगी होती हैं।

अमरीका की दो बड़ी कम्पनियां—टी.आर.डब्ल्यू इन्कारपोरेशन और लॉकहीड मिसाइल्स एण्ड स्पेस कम्पनी ओटेक संयंत्रों का डिजाइन तैयार कर रही हैं।

अमरीका के अलावा जापान और कई यूरोपीय देश भी ओटेक सयत्रों में रुचि ले रहे हैं।

ओटेक संयंत्रों को स्थापित करना तथा उनसे तटों तक बिजली पहुचाने के लिए केबल आदि बिछाने का काम बहुत महंगा पड़ता

है यद्यपि इन संयत्रों से हर मौसम मे हर समय बडे पैमाने पर सस्ती बिजली मिल सकती है लेकिन उनकी स्थापना करने और व्यावहारिक रूप में काम में लाने में बहुत कठिनाइयां हैं। ओटेक संयंत्रों के बहुत बड़े चबूतरों को तैराकर रखना, संयंत्रों की देखभाल करना, उनके लिए ऊष्मा विनिमयक बनाना तथा ठंडे पानी को प्लेटफार्म तक पहुंचाना काफी कठिन समस्याएं हैं। इन समस्याओं का हल निकालने में समय लगेगा। 250 मैगावाट बिजली उत्पादन करने वाले ओटेक संयंत्र में लगभग 30 मीटर व्यास की 1000 मीटर लंबी नली प्रयोग करनी पड़ती है। इस नली में 15 लाख लीटर प्रति सेकन्ड के हिसाब से पानी बहता है। इतना पानी संसार की सबसे बड़ी नदी में रहता है।

हमारे तटवर्ती सागरों में बहुत से ओटेक संयंत्र लगाए जा सकते हैं क्योंकि यहां के जलस्तरों के तापमानों का अन्तर बहुत उपयुक्त पाया गया है। यहां सतह का पानी लगभग 29 डिग्री सेन्टीग्रेट होता है और 1000 मीटर गहरे पानी का लगभग 6 डिग्री सेन्टीग्रेट होता है। कुछ लोगों का विचार है कि भारत के पश्चिमी और पूर्वी तटों के निचले भागों तथा अण्डमान निकोबार और लक्षद्वीप टापुओं के तटों पर 25 से 50 मैगावाट के छोटे-छोटे ओटेक संयंत्र लगाए जा सकते हैं। ये संयंत्र स्थानीय क्षेत्रों में बिजली की समस्या का समाधान कर सकते हैं।

तमिलनाडु बिजली बोर्ड ने राष्ट्रीय सागर विज्ञान के सहयोग से ओटेक संयंत्रों की स्थापना के लिए अपने तटों का सर्वेक्षण कराया है। हमारे जलयान गवेषणी द्वारा किए गए सर्वेक्षणों से बंगाल की खाड़ी में यह पाया गया कि 75 मीटर मोटी गर्म पानी की एक तह है जिसमें सतह के पानी का तापमान 29 डिग्री सेन्टीग्रेट है तथा 1200 मीटर गहराई पर पानी का तापमान 6 डिग्री सेन्टीग्रेट है। ओटेक संयंत्र लगाने के लिए ये सबसे उपयुक्त तापमान अन्तर है। तमिलनाडु के तट पर 4 ऐसे स्थानों का पता लगाया जा चुका है जहां ओटेक संयंत्र लगाए जा चुके हैं। इनमें से एक स्थान पर बहुत से ओटेक संयंत्र लगाने के लिए तमिलनाडु बिजली बोर्ड ने अमरीका की जनरल इलैक्ट्रिक कम्पनी के तकनीकी सहयोग की एक योजना बनाई है।

हो सकता है कुछ ही वर्षों में बहुत सारे ओटेक संयंत्र लग

(4) सागर तरंगों से विद्युत उत्पादन—सागर की स
की तरंगें सदा ही उठती और गिरती रहती हैं। जल
ऊपर ये तरंगें किसी न किसी रूप में सागरों की छात
रहती हैं। सागर के पानी की सतह पर तरंगों का पैदा
के कारण होता है। उठती-गिरती तरंगों में अपार शक्
जब ये लहरें किनारों से टकराती हैं तो अपार ऊर्जा पै
ऐसा अनुमान है कि ये लहरें सागर के तटों से रोज
50 मैगाटन हाइड्रोजन बम के तुल्य ऊर्जा मुक्त करती है
में भी अपरिमित ऊर्जा होती है। लगभग 3 मीटर ऊं
अपने प्रतिमीटर तरंग शृंग (Wave Crest) से 100 कि
दर से ऊर्जा का संचार कर सकती है जो इंजनों के स
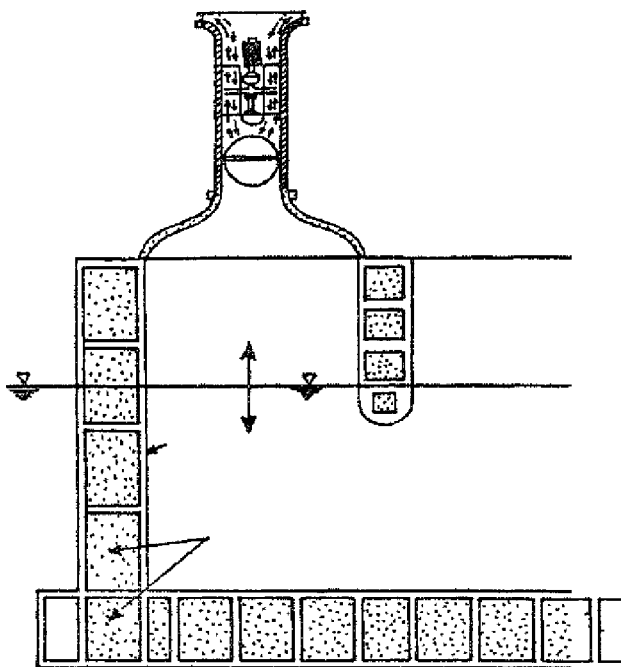
चित्र 11.5 : सागर की लहरों से विद्युत उत्पादन :

वाहनों को पूरी शक्ति से चला सकती है। महासागर विकास विभाग के सहयोग से तरंगों से बिजली पैदा करने की एक परियोजना पूरी होने वाली है।

समुद्री लहरों की ऊर्जा को नार्वे और फ्रांस में प्रयोग किया जा रहा है। चित्र 11.5 में विद्युत उत्पादन संयंत्र दिखाया गया है।

(5) पानी की लवणताओं के अन्तर से विद्युत उत्पादन—यह देखा गया है कि समुद्र के जल के विभिन्न स्तरों में लवणताओं का अन्तर होता है। इस अन्तर को विद्युत उत्पादन के लिए प्रयोग कर सकते हैं। उन स्थानों पर जहां पर नदियां सागरों में गिरती हैं वहां परासरी दाब इतना होता है जो 240 मीटर ऊंचाई से गिरने वाले पानी के बराबर होता है। सागर के बीच के पानी और मरुस्थलीय तटों के पानी की लवणताओं में बहुत अधिक अन्तर होता है। इन स्थानों के जल से इतनी बिजली बनाई जा सकती है जितनी कि 10 से 15,000 फुट ऊंचाई से गिरते हुए पानी से बनती है।

सागर की तली से तेल निकालने के लिए जो कुएं खोदे जाते है उनके सूखे छेदों से खारा पानी निकलते हुए देखा गया है। इन छेदों से भी ऊर्जा पैदा की जा सकती है। लवणता का जितना अधिक अन्तर होता है उतनी ही अधिक विद्युत पैदा करना सम्भव है।

(6) समुद्री ऊर्जा के दूसरे स्रोत—पृथ्वी अपनी धुरी पर घूर्णन करती है जिसके कारण समुद्रों का पानी वृत्तीय धाराओं में घूमता रहता है। यह संकल्पना सन् 1835 में गैसपार्ड गुस्ताव या कोरियेलिस ने प्रस्तुत की थी। इस प्रकार की समुद्री धाराओं के ऊर्जा संरक्षण से ऊर्जा पैदा की जा सकती है।

समुद्रों का बायोमास प्रतिवर्ष 10 अरब टन कार्बन को प्रकाश संश्लेषण द्वारा स्थिर करता है। इससे हम तरल ईंधन प्राप्त कर सकते हैं। समुद्री हवाएं भी ऊर्जा का स्रोत हैं।

इस तरह हम देखते हैं कि हमारे सागर ऊर्जा का महान स्रोत है। इनसे हमें सहज रूप में, कम मूल्य पर अधिक बिजली मिल सकती है। ऐसा लगता है कि कुछ ही वर्षों में सागरों से हमारी विद्युत आवश्यकताएं पूरी होने लगेंगी।

अध्याय 12

वर्षा के जन्मदाता सागर

हमारे जीवन के लिए हवा, पानी और भोजन तीनों ही अत्यन्त आवश्यक हैं। यदि हमें हवा न मिले तो हम थोड़ी ही देर में मर जाएंगे। यदि धरती पर पानी न होता तो जीवन भी न होता। पेड़-पौधे, जीव-जन्तु सभी को जल की आवश्यकता होती है। हमारी धरती पर तीन चौथाई पानी है। पानी के नदी, नाले, तालाब, झरने, झील, सागर आदि अनेक स्रोत हैं। पृथ्वी पर जितना पानी है उस पानी का 97 प्रतिशत पानी सागरों में है। धरती के अधिकांश स्रोतों को पानी वर्षा और बर्फ पिघलने से मिलता है इसीलिए सागरों को वर्षा का जन्मदाता कहते हैं।

धरती पर पानी का चक्र भाप, बादल और वर्षा के रूप में चलता ही रहता है। इसीलिए धरती पर पानी की कुल मात्रा स्थिर रहती है। चित्र 12.1 में पृथ्वी का जलचक्र दिखाया गया है।

धरती से जो पानी आज वाष्पित हुआ है उसे फिर से उसी स्थान पर पहुंचने में 1000 वर्ष का समय लगता है अर्थात् जलचक्र की अवधि 1000 वर्ष है।

गर्मी के मौसम में नदियों, झीलों, सागरों और तालाबों का पानी सूर्य की गर्मी से जलवाष्प में बदलता रहता है। पानी की यह वाष्प ऊपर उठकर हवा में मिलती रहती है। पानी की वाष्प वायु से हल्की होती है इसीलिए यह वायुमंडल में ऊपर उठती रहती है। वायुमडल में थोड़ा-सा तापमान कम होने पर यह जलवाष्प बादलों का रूप धारण

कर लेती है। वायुमंडल में धूल के कण होते हैं। जब ये बादल अधिक तापमान से कम तापमान वाले क्षेत्र की ओर जाते हैं तो तापमान की गिरावट के कारण जलवाष्प इन धूल के कणों पर संघनित हो जाती है। इस प्रकार बादलों में वर्षा की छोटी-छोटी बूंदें बन जाती हैं। संघनन की क्रिया में इन बूंदों का आकार बढ़ जाता है और बादलो से ये वर्षा के रूप में धरती पर बरस जाती हैं। इसी को हम बरसात का होना कहते हैं।

वाष्पीकरण की क्रिया वैसे तो सभी जल स्रोतों से होती है लेकिन मुख्य रूप से यह सागरों से होती है इसीलिए हम सागरों को वर्षा का जन्मदाता कहते हैं।

चित्र 12.1 : जलचक्र

वर्षा होने के लिए जरूरी है कि जलवाष्प से भरपूर हवा ऊपर की ओर उठे। जब जलवाष्प युक्त हवा ऊपर उठती है तो यह ठंडी होती है और ठंडेपन के कारण संघनन की क्रिया होती है। इस संघनन की क्रिया के बाद ही बारिश होती है।

मानसून

वर्षा शुरू होने से पहले उत्तरी भारत के हर व्यक्ति के मुंह पर मानसून शब्द रहता है। आमतौर पर लोग मानसून का अर्थ वर्षा से लगाते हैं लेकिन मानसून का अर्थ वर्षा से समझना थोड़ा-सा गलत

है। वास्तव में मानसून शब्द अरबी भाषा के 'मासिन' से जन्मा है जिसका अर्थ होता है पूरे साल में हवाओं के बहने की दिशाओं मे एक निश्चित परिवर्तन। मानसून हवाएं हमारे लिए वर्षा वाले बादल लाती हैं इसीलिए सामान्य भाषा में मानसून और वर्षा एक-दूसरे के पर्यायवाची बन गए हैं। मानसूनी हवाओं का जन्म सागरों से होता है इसीलिए सागरों को मानसून का या वर्षा का जन्मदाता कहते हैं। गर्मी के मौसम में सागरों से धरती की ओर बहने वाली हवाएं और सर्दी की ऋतु में जमीन से सागरों की ओर बहने वाली हवाएं मानसून हवाएं कहलाती हैं। जाड़ों में धरती से सागरों की ओर बहने वाली हवाएं खुश्क और ठंडी होती हैं इसीलिए हमारी त्वचा पर रूखापन आ जाता है।

दक्षिण एशिया में हिन्द महासागर से तट की ओर चलने वाली हवाएं मानसूनी हवाएं कहलाती हैं। इन हवाओं से वर्षा होने की सम्भावनाओं का पता लगाया जाता है। मानसून दो प्रकार के होते हैं--ग्रीष्मकालीन मानसून या दक्षिण-पश्चिम मानसून। दूसरा मानसून शीतकालीन मानसून या उत्तरी-पूर्वी मानसून कहलाता है। हमारे देश मे 90 प्रतिशत बरसात ग्रीष्मकालीन मानसून से होती है।

ये हवाएं जून के मध्य में हिन्द महासागर से तट की ओर बढ़ती है और हिमालय पर्वत की चोटियों से टकराकर मैदानी भागों में वर्षा करती हैं। इसके विपरीत सर्दियों में मध्य एशिया और उत्तर भारत के क्षेत्रों में बहुत ठंडी, शुष्क तथा तीव्र हवाएं बाहर की ओर बहने लगती हैं। इन हवाओं को शीतकालीन मानसून की संज्ञा देते हैं। भारत के तटीय क्षेत्रों में इन शीतकालीन मानसूनी हवाओं से कुछ वर्षा होती है।

अब हम यह जानने का प्रयास करेंगे कि मानसूनी हवाएं कैसे पैदा होती हैं।

आमतौर पर यह देखा गया है कि मानसून हवाएं उन्हीं स्थितियों में पैदा होती हैं जो थल और जल हवाओं को पैदा करती हैं। इन स्थितियों में मुख्य रूप से थल और सागरों का असमान रूप से गर्म

ोना आता है। गर्मियो के मौसम में थल की सतह सागरों की तुलना जल्दी गर्म हो जाती है इससे थल पर वायुदाब सागरों की तुलना कम हो जाता है। भौतिक शास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार वायु धिक दाब से कम दाब की ओर बहती है इसीलिए वायु सागरों धरती की ओर बहने लगती है। अप्रैल से जून के महीने तक र्मी बहुत पड़ती है। इसका परिणाम यह होता है कि मध्य दक्षिण शिया के क्षेत्र तेजी से गर्म होने लगते हैं। इन क्षेत्रों का तापमान क्षिण हिन्द महासागर और पूर्व प्रशान्त महासागर की तुलना में काफी धिक हो जाता है। अधिक तापमान के कारण धरती पर वायुदाब म हो जाता है। परिणाम यह होता है कि समुद्र तट से थल की र हवाएं बहने लगती हैं। हवाओं का यह बहाव चित्र 12.2 में खाया गया है। इसे हम गर्मी का मानसून कहते हैं।
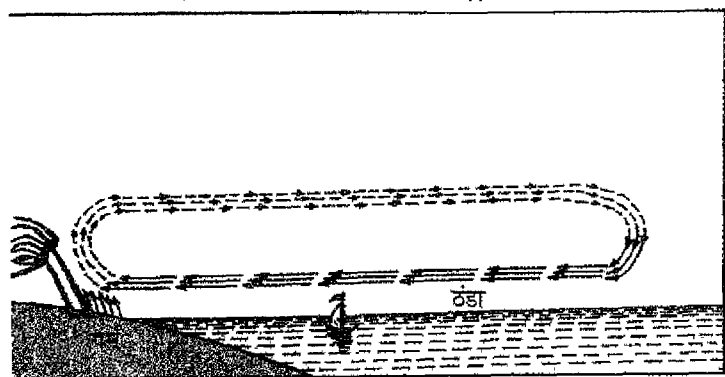
चित्र 12.2 : समुद्र तट से थल की ओर बहने वाली हवाएं

जाड़े की शुरूआत में पूरे एशिया में ठंड पड़ने लगती है। परिणाम ॰ होता है कि इस क्षेत्र के थल का तापमान आसपास के सागरों कम हो जाता है। दूसरे शब्दों में गर्मियों का चक्र अब उल्टा हो ाता है। इससे जमीन पर वायुदाब बढ़ जाता है और हवाएं थल समुद्र तट की ओर बहने लगती हैं। इसे शीतकालीन मानसून कहते : इस अवधि में दक्षिण और पूर्वी एशिया में मानसूनी जलवायु रहती । चित्र 12.3 में थल से समुद्र तट की ओर बहने वाली मानसूनी ाएं दिखाई गई हैं। हमारे देश में तमिलनाडु के कुछ भागों में सर्दी
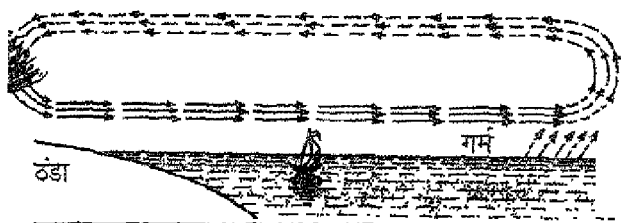
चित्र 12.3 : थल से समुद्र तट की ओर बहने वाली हवा

नसून पवनों से वर्षा होती है। चित्र 12.4 में मानसून व
र्षा का होना दिखाया गया है।
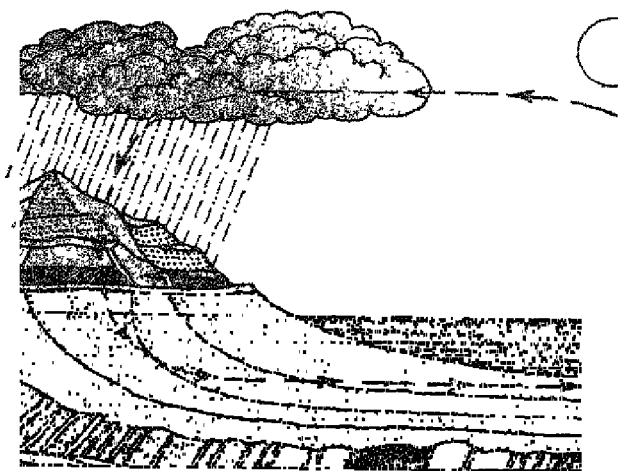
चित्र 12.4 : मानसून का बनना और वर्षा होना

दक्षिणी गोलार्द्ध में ऋतुएं बदल जाती हैं। जब उत्तरी
र्गत हमारे देश में गर्मी होती है तब आस्ट्रेलिया में र
जब आस्ट्रेलिया में गर्मी होती है तब हमारे देश में र
ही कारण है कि हमारे देश की जाड़े की मानसून उ
की मानसून बन जाती है। इसी से आस्ट्रेलिया के र
र्षा होती है।
हिमालय के निचले ढलानों पर भारी वर्षा होती है।

मे भारत के चेरापूंजी नामक स्थान पर सबसे अधिक वर्षा होती है। यहां साल भर में औसत वर्षा 200 इंच से अधिक अर्थात् 1000 सेंटीमीटर से अधिक होती है। सन् 1960 अगस्त से सन् 1961 जुलाई तक इस स्थान पर 2646 सेंटीमीटर वर्षा हुई जो अपने आप में एक रिकार्ड था। यूरोप में मैदानी क्षेत्रों में साल की औसत वर्षा 60 सेंटीमीटर और पर्वतीय क्षेत्रों में 125 सेंटीमीटर होती है। अमरीका के रॉकी पर्वतों में साल भर में 340 सेंटीमीटर वर्षा होती है और बर्फ गिरती है। लेकिन अन्दर के भागों में काफी कम वर्षा होती है।

मानसून से प्रयोग

मानसून से पैदा होने वाली विभिन्न प्रदेशों में वर्षा होने की जटिल क्रियाओं को समझने के लिए विश्व मौसम विज्ञान संगठन और अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक यूनियन परिषद ने 1979 में एक कार्यक्रम आयोजित किया। इस कार्यक्रम का नाम "अन्तर्राष्ट्रीय मानसून प्रयोग" (Monsoon Experiments or Monex) रखा गया था। यह समस्त धरती पर मौसम संबंधी प्रयोगों से ताल्लुक रखता था। वास्तव में यह प्रयोग केवल एक ही बार किया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य गर्मी की मानसून संबंधी विचारधाराओं को बेहतर रूप में समझना था। इन प्रयोगों का सम्बन्ध अरब सागर, बंगाल की खाड़ी तथा आसपास के सागरों से था। यही कारण था कि ये प्रयोग हमारे लिए बहुत अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुए। इस प्रयोग में भारत समेत 50 देशों ने भाग लिया था। मानसून संबंधी प्रयोगों को तीन चरणों में पूरा किया गया था।

इन प्रयोगों को करने के लिए 1979 में 52 अनुसंधान पोतों और विशेष हवाई जहाजों ने भाग लिया था। इनका कार्यक्षेत्र 10 डिग्री उत्तर से 10 डिग्री दक्षिण अक्षांशों के बीच का क्षेत्र था।

इन प्रयोगों की अवधि में अनुसंधान पोतों ने हिन्द महासागर के विभिन्न भागों विशेष रूप से अरब सागर और बंगाल की खाड़ी की अनेक अन्वेषण यात्राएं कीं। इन यात्राओं के दौरान वायुमंडल के अध्ययन के लिए बहुत से रॉकेट और उपकरणयुक्त गुब्बारे छोड़े गए थे।

इन प्रयोगों के कार्यक्रम में सबसे पहली बार भारतीय अनुसंधान

पोतों पर उच्च वायुमंडल का अध्ययन करने के लिए उपकरण लगाए गए थे। भारत के वायुयानों ने मानसून क्षेत्रों का अध्ययन किया और महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त कीं। इसके लिए निम्न दाब अध्ययन के लिए उपकरण प्रयोग किए गए।

हमारे अंतरिक्ष विभाग ने भी मोनेक्स कार्यक्रम में भाग लिया था। दिल्ली में इन प्रयोगों के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रबन्ध केन्द्र स्थापित किया गया जिससे बहुत से देशों के वैज्ञानिकों ने मानसून संबधी अध्ययन किए।

मोनेक्स कार्यक्रम में किए गए प्रयोगों से मानसूनों के बहने और उनके वर्षा करने के तरीकों से संबंधित अनेक नए तथ्य हमारे सामने आए। इन प्रयोगों से पता चला कि संसार के अनेक क्षेत्रों में लगभग ऐसी ही परिस्थितियां हैं जैसी दक्षिण-पूर्व एशिया में। फिर भी मानसून केवल इसी क्षेत्र में इतना प्रबल होता है। इसके दो कारण हैं। मानसून पैदा होने के लिए जमीन और सागर के बहुत बड़े क्षेत्रों में तापमानों का अन्तर होना चाहिए और वह भी बहुत लम्बे समय के लिए बना रहना चाहिए। ऐसी स्थिति केवल ऊष्ण कटिबंध में ही हो पाती है। ऐसी परिस्थितियां केवल दक्षिण-पूर्व एशिया में होती हैं इसलिए वहीं मानसून प्रबल होता है।

बर्फ का गिरना

हिमपात या बर्फ का गिरना ऊंचे पहाड़ों की चोटियों पर होता है। बादलों से गिरने वाली बूंदें जब ठंडे क्षेत्रों से गुजरती हैं तब कम तापमान के कारण ये बूंदें जमकर हिमकणों में बदल जाती हैं। अधिकांश हिमपात पहाड़ों की चोटियों पर होता है। संसार की ऊंची पर्वतमालाओं पर होने वाला हिमपात सामान्यतः सागरों से उठी हुई वाष्प के कारण होता है।

पर्वतों पर जमी हुई बर्फ गर्मियों में पिघलकर पानी के रूप में नदियों में आती रहती है। इस प्रकार नदियों का अधिकांश पानी वर्षा और बर्फ की देन है। यह पानी वास्तव में सागरों की ही देन है।

सागरों से वाष्प, वाष्प से बादल, बादलों से वर्षा और बर्फ का

यह चक्र न जाने कब से चला आ रहा है। सागर से वाष्पित होने वाले जल को फिर से सागर में पहुंचने के लिए लम्बी यात्रा करनी पड़ती है। वैज्ञानिकों ने इस समय की गणना करके पता लगाया है कि जलचक्र को एक हजार वर्ष का समय लगता है। इस प्रकार हमारे सागर और महासागर वर्षा के ही जन्मदाता नहीं बल्कि पृथ्वी के समस्त पेड़-पौधों और जीव-जन्तुओं के जीवनदाता माने जा सकते हैं।

अध्याय 13

अन्टार्कटिका सम्पदा

धरती का सबसे दुर्गम प्रदेश अन्टार्कटिका है। अन्टार्कटिका के लिए आज के वैज्ञानिक बहुत बड़ी तादाद में विश्व के सभी देशों से जा रहे हैं। यह बहुत बड़ी प्रयोगशाला बन गई है। दुनियाभर के हजारों वैज्ञानिक इस विशाल महाद्वीप और अन्टार्कटिका महासागर की विचित्रताओं से संबंधित अनुसंधान कार्य कर रहे हैं। अन्टार्कटिका महाद्वीप में खनिज संपत्ति, जीव और वनस्पति सम्पदा भारी तादाद मे है। इस अध्याय में अन्टार्कटिका से प्राप्त खनिज संपदा, जैव और वनस्पति सम्पदा की जानकारी दी गई है।

अन्टार्कटिका में आज एक हजार से भी अधिक खनिज पदार्थो के विषय में वैज्ञानिकों को जानकारी है। इनमें से सौ से अधिक खनिज ऐसे हैं जो हमारे आम जीवन में काम आते हैं।

अन्टार्कटिका में रूबी, पुखराज, क्वार्टज, कोयला, गन्धक आदि ऐसे पदार्थ मिले हैं जो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। ट्रांस अन्टार्कटिका पर्वतों का ऐसा क्षेत्र है जहां कोयले के विशाल भण्डार हैं। कहीं-कहीं इनकी मोटाई इतनी अधिक है जो दस मीटर तक देखी गई है। यहां पर कोयला निकालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं लगता। कोयले के नमूनों का विश्लेषण करके यह पता लगाया गया है कि इनमें गन्धक और बिटूमिन की मात्रा काफी अधिक है।

अन्टार्कटिका की चार्ल्स पर्वतमाला में लोहा विशाल खनिज भण्डार के रूप में है। इसके अतिरिक्त पूर्वी अन्टार्कटिका के कई स्थानों पर
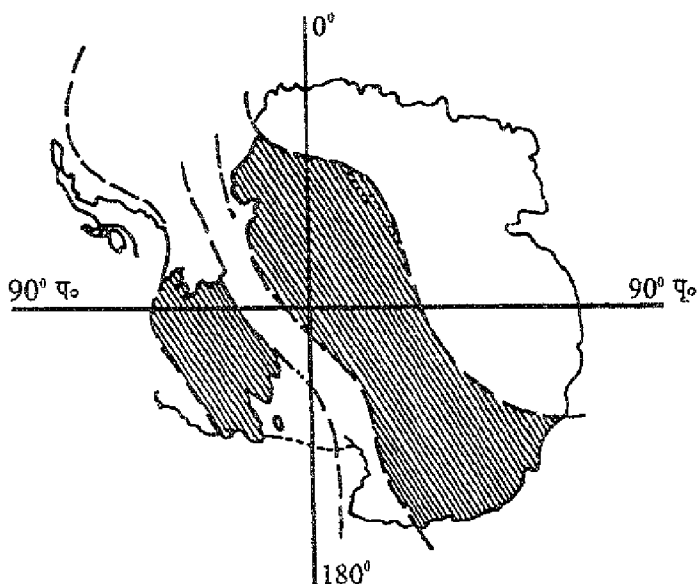
चित्र 13.1 : अन्टार्कटिका खनिज सम्पदा क्षेत्र

लोहे की खानों के छोटे-छोटे क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों में मैग्नेटाइट जो लोहे का अयस्क है उसकी मोटाई एक मीटर तक पाई गई है। इन क्षेत्रों में पचास प्रतिशत तक लोहा है। चित्र 13.1 में अन्टार्कटिका के खनिज संपदा से युक्त क्षेत्र दिखाए गए हैं।

अन्टार्कटिका के दक्षिणी और उत्तरी हिस्सों में वैज्ञानिकों ने बहुत से अनुसंधान किए। इन अनुसंधानों से यह पता चला कि इन क्षेत्रों में तांबा, लोहा, मौलीबडेनम, सीसा, जस्ता और चांदी के बहुत से अयस्क हैं। ऐसा लगता है कि इन खनिजों को निकालना आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं लगता।

रूस और अमरीका द्वारा किए गए सर्वेक्षणों से पता लगता है कि अन्टार्कटिका क्षेत्र में कई स्थानों पर तेल और गैस के भण्डार मिल सकते हैं। इनकी सम्भावना बेलिगसूसन, रॉस तथा बेडल क्षेत्रों में अधिक है। इन क्षेत्रों में लगभग 50 अरब बैरल तेल प्राप्त हो सकता है जो अलास्का से प्राप्त तेल की मात्रा के बराबर है। रूस के कुछ वैज्ञानिकों का कहना है कि इन क्षेत्रों में तेल के भण्डार अलास्का से भी अधिक हो सकते हैं।

वैज्ञानिको का ऐसा अनुमान है कि तेल और गैस के भण्डार अन्टार्कटिका के तटवर्ती क्षेत्रों में ही हैं। ये भण्डार रॉस बेसिन और बेडल सागर के बेसिन में ही हैं। बास मुहाने के निकट, जो ऑस्ट्रेलिया और तस्मानिया के बीच स्थित है, वहां पर भी तेल के भण्डारों की सम्भावना है। न्यूजीलैंड और अर्जेंटाइना के उन तटीय क्षेत्रों में भी तेल के भण्डार मिले हैं जो कभी गोंडवाना लैण्ड के हिस्से थे। आज के अनुसंधानों के आधार पर यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि अन्टार्कटिका के क्षेत्र में निश्चय ही तेल मिलेगा।

पेन्साकोला पर्वतों में स्थित अन्टार्कटिका के डुफेक मासिफ क्षेत्र में 33000 वर्ग किलोमीटर चट्टानी इलाका है। यह लगभग 6.5 किलोमीटर गहरा है। यह क्षेत्र भी कभी गोंडवाना लैंड का भाग था जिसमें आज के दक्षिण अफ्रीका का ब्रुशवेल्ड क्षेत्र था। ब्रुशवेल्ड क्षेत्र में सीसा, वेनेडियम, जस्ता, कोबाल्ट, लोहा, टिन और सोना मिलता है। ऐसा विश्वास किया जाता है कि डुफेक, मासिफ क्षेत्र में भी इन खनिजों के भण्डार हो सकते हैं। ऐसा अनुमान किया जाता है कि अन्टार्कटिका के अनेक क्षेत्रों में प्लेटिनम, तांबा, निकिल और क्रोमियम के भंडार हो सकते हैं।

संसार के बहुत से देश अन्टार्कटिका से खनिज संपदा प्राप्त करने के भरसक प्रयास कर रहे हैं। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए रूस ने सन् 1975 में बेडल सागर में अपना अनुसंधान केन्द्र स्थापित किया था। इस अनुसंधान केन्द्र का मुख्य कार्य खनिज संपदा के विषय में जानकारी प्राप्त करना था। सन् 1979 में जापान ने यह घोषणा की थी कि अगले तीन वर्षों तक वह तेल और प्राकृतिक गैस के ठिकानों का पता लगाएगा। जर्मनी, नार्वे, अमरीका, रूस और कई दूसरे राष्ट्र रॉस और बेडल सागर में सम्पदाओं का पता लगाने में अपना सर्वेक्षण कार्य कर रहे हैं। भारत के अभियान दल भी अन्टार्कटिका की सम्पदाओं का पता लगाने के प्रयास कर रहे हैं।

अन्टार्कटिका क्षेत्र में खनिज प्राप्त करने में निम्नलिखित कठिनाइयां हैं—

(1) अन्टार्कटिका क्षेत्र की जलवायु बहुत विषम है, वहां ठंड बहुत पड़ती है और साथ ही साथ बर्फ गिरती है। इसीलिए खनिज पदार्थों को निकालना काफी कठिन कार्य है।

(2) अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि के अनुसार इस क्षेत्र को व्यापारिक क्षेत्र की तरह प्रयोग नहीं किया जा सकता। सन् 1981 में अन्टार्कटिका संधि से जुड़े देशों ने कुछ सिद्धान्तों की घोषणा की जिसके अनुसार इस महाद्वीप से खनिज सम्पदा का पता लगाने के लिए हर सम्भव प्रयास किया जा सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए सन् 1982 मे न्यूजीलैंड में एक बैठक की गई। तब से अब तक बहुत-सी बैठकें की जा चुकी हैं।

(3) विषम मौसम के कारण यहां जीवन को खतरे बने रहते हैं। अतः कदम-कदम पर सावधानी बरतना अति आवश्यक है।

आशा है कि आने वाले वर्षों में अन्टार्कटिका खनिज संपदा के विषय में और भी जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

अन्टार्कटिका का जीवजगत

अन्टार्कटिका का लगभग 98 प्रतिशत भाग बर्फ से ढका रहता है और गर्मियों में केवल 2 प्रतिशत भाग ही जमीन के रूप में दिखाई देता है। इसीलिए लोगों की आम धारणा है कि इस बर्फीले प्रदेश में कोई जीवजन्तु कैसे जीवित रह सकता है। किन्तु लोगों की यह धारणा गलत है।

रॉस आइस शेल्फ के पूर्वी किनारों पर 150 किलोमीटर लम्बा और 20 किलोमीटर चौड़ा जमीन का एक ऐसा क्षेत्र है जिस पर जीवो के विषय में जानकारी प्राप्त की गई है। इस टुकड़े का कुल क्षेत्रफल 3000 वर्ग किलोमीटर है।

अन्टार्कटिका में एक विचित्र पक्षी पाया जाता है जिसे पेंगुइन कहते हैं। यह पक्षी आदमी की तरह अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है। इस पक्षी के पंख विकासक्रम में हाथों की तरह हो गए। यही कारण है कि पेंगुइन उड़ नहीं सकता लेकिन तैरने में बहुत निपुण

होता है। यह पक्षी लगभग 50 किलोमीटर प्रति घंटा के वेग से तैर सकता है। पेंगुइन की चाल मन को मोह लेती है। पेंगुइन अधिकांश समय जमीन पर या पानी पर बिताते हैं। ये पक्षी समूहों में रहते हैं। इनकी बस्तियों में हजारों पक्षी हो सकते हैं।

पेंगुइन पक्षी की 3 जातियां होती हैं।

(1) भारी पूंछ वाले पेंगुइन जैसे जैनटू पेंगुइन, अदेली पेंगुइन और चिनस्ट्रैप पेंगुइन।

(2) क्रेसटिन पेंगुइन जैसे मैकरोनी पेंगुइन और रॉकहूपर पेंगुइन तथा

(3) एपटीनोटिड पेंगुइन जैसे किंग और एम्परर पेंगुइन।

इन सभी प्रकार की पेंगुइनों को उनकी लम्बाई और सिर के अन्तर के आधार पर पहचाना जाता है। इनकी ऊंचाई 40 सेंटीमीटर से 120 सेंटीमीटर तक होती है। एम्परर पेंगुइन सबसे ऊंची होती है। इनमें नर और मादा के आकारों में अधिक अन्तर नहीं होता। पेंगुइन की पीठ का रंग काला होता है और पेट का रंग सफेद होता है।

इन सभी पेंगुइनों में अदेली पेंगुइन के विषय में सबसे अधिक जानकारी उपलब्ध है और मैकरोनी और रॉकहूपर की सबसे कम जानकारी प्राप्त है। अदेली पेंगुइन अदेली लैंड पर मिलता है इसीलिए अदेली के विषय में सबसे अधिक जानकारी है। अदेली पेंगुइन समुद्री किनारे पर खाली जमीन में अपना घर बनाता है।

इनका मुख्य भोजन मछली तथा समुद्री फैनी होता है। ये समुद्री किनारों पर भी अंडे देती हैं और अण्डों से बच्चे निकलने के बाद 1 से 2 साल का समय समुद्र के किनारे ही बिताते हैं। चूंकि समुद्र के किनारे भोजन आसानी से मिल जाता है इसीलिए इन्हें वहां समय बिताना अच्छा लगता है। एम्परर पेंगुइन जो चित्र 13.2 में दिखाया गया है देखने में सबसे बड़ा और सुन्दर होता है।

एम्परर पेंगुइन की मादा जाड़े की ऋतु में बर्फ पर अण्डा देती है और अण्डे को अपने पैरों के बीच में रखकर चलती है। अण्डे सेने का काम नर करता है। जब अण्डे में से बच्चा निकलने को होता है तो मादा पेंगुइन अण्डे की सिकाई करने के लिए आ जाती
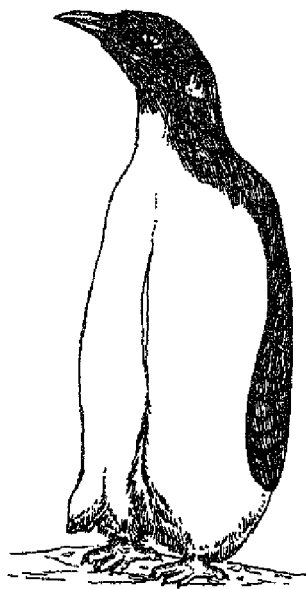
चित्र 13.2 : एम्परर पेंगुइन

है। अण्डे से बच्चा निकलने के बाद यह उसे ठंड से बचाने के लिए अपने पैरों के बीच में रखती है। ऐसा करने से शत्रु का खतरा भी टल जाता है।

किंग पेंगुइन दक्षिणी अन्टार्कटिका द्वीपों पर पाया जाता है। इसका मुख्य भोजन स्क्विड और मछलियां हैं। यह पेंगुइन 3 वर्ष में 2 बच्चे पैदा करती है। जबकि एम्परर पेंगुइन एक साल में एक बच्चा पैदा करती है। अपने छोटे बच्चों को माता-पिता अपनी चोंच से भोजन कराते हैं।

चिनस्ट्रैप पेंगुइन मुख्यतः दक्षिणी एटलांटिक महासागर तथा अन्टार्कटिका प्रायद्वीप में पाई जाती है। इसका मुख्य भोजन क्रिल है। एक बार में मादा समुद्र के किनारे दो अंडे देती है। अंडों से बच्चे निकलने के बाद कुछ महीने बाद इनकी मां इन्हें समुद्र से दूर ले जाती है।

जैनटू पेंगुइन अन्तः तटीय जल तक ही सीमित रहती है। इनका

मुख्य भोजन क्रिल और मछलियां हैं।

कुछ मिलाकर पेंगुइन पक्षियों की 18 किस्में होती है। कुछ का विवरण हमने दे दिया है। पेंगुइन पक्षी इतनी वि कैसे सहन करते हैं आइए समझें।

वास्तव में इस पक्षी के शरीर पर पंखों की एक मोटी होती है। इस गद्दी के कारण ठंडे से ठंडा मौसम भी इस प्रभावित नहीं करता। पंखों की इस गद्दी में पानी भी अन्दर सकता। इन पंखों में बहुत बारीक छेद होते हैं जो हवा रखते हैं और पक्षी को गर्म रखने में मदद करते हैं। पंखो तह के नीचे चर्बी की एक तह होती है जो पेंगुइन के पूरे बर्फीली ठंड से बचाए रहती है। यह चर्बी शरीर की गर्मी रखती है तथा पानी और भोजन को जमा करने में मदद

पेंगुइन के अतिरिक्त अन्टार्कटिका महासागर में क्रिल ना पाया जाता है। इसकी संख्या बहुत होती है। चित्र 13.3 जीव दिखाया गया है। क्रिल शब्द नार्वे की भाषा का शब्द है अर्थ है छोटी मछली। आजकल यह नाम अनेक प्लान्कटनों प्रयोग किया जाता है। यह एक शाकाहारी जीव है तथ प्लान्कटन इसका मुख्य भोजन है।
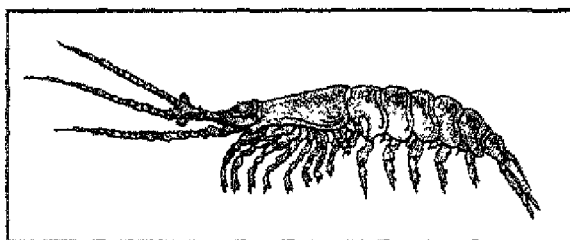
चित्र 13.3 : क्रिल

वैज्ञानिक अनुमानों के अनुसार अन्टार्कटिका महासागर मे दस करोड़ टन क्रिल मौजूद हैं। यह अपनी संख्या इतनी बढ़ाता है कि हर साल पांच करोड़ टन क्रिल निकालने पर वजन में कोई अन्तर नहीं आता। विशेषज्ञों के अनुसार य

का जाना-माना स्रोत है। इसमे प्रोटीन की इतनी मात्रा होती है जितनी लोबस्टर और पशुओं के मांस में होती है। यह जीव व्हेल, सील, पेंगुइन तथा अन्टार्कटिका में पाए जाने वाले पक्षियों का विशेष भोजन है।

अन्टार्कटिका के बर्फीले महासागर में कई प्रकार की मछलियां मिलती हैं। इन मछलियों की कुछ प्रजातियां गहरे सागर में पाई जाती हैं तथा कुछ मछलियां पानी की सतह पर पाई जाती हैं। धरती के महासागरों में लगभग मछलियों की 20 हजार प्रजातियां मिलती है जिनमें से 100 प्रजातियां अन्टार्कटिका में पाई जाती हैं। इनमें से ड्रैगन फिश, सिल्वर फिश, अन्टार्कटिका ट्यूफिश आदि मुख्य हैं। ये सभी मछलियां क्रिल को बड़े शौक से खाती हैं।
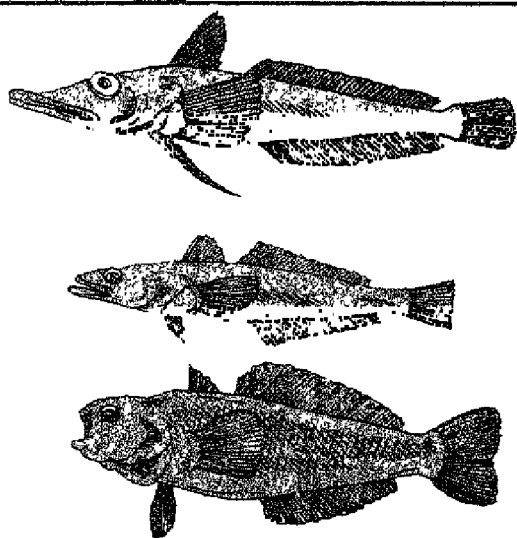
चित्र 13.4 : अंटार्कटिका सागर की कुछ मछलियां

मछलियों की उपयोगिता इस क्षेत्र में इसलिए भी अधिक है क्योंकि ये यहां के जीवों के भोजन शृंखला का महत्वपूर्ण अंग है। अन्टार्कटिका में पाए जाने वाली कुछ मछलियां चित्र 13.4 में दिखाई गई हैं। अन्टार्कटिका महासागर में सील मछली बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती है। चित्र 13.5 में केकड़ाभक्षी सील दिखाई गई है।
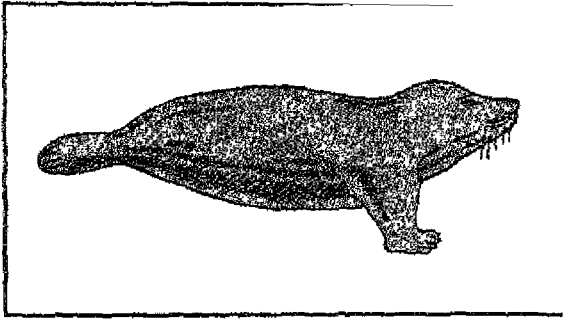
चित्र 13.5 : केकड़ाभक्षी सील

ऐसा अनुमान है कि इनकी संख्या तीन करोड़ के ल
और यह सबसे अधिक संख्या में पाए जाने वाले स्तनधारी
से एक है। संसार में पाई जाने वाली सील मछलियों में व
एक केकड़ाभक्षी सील होती है। नर सील की लम्बाई मादा
होती है। इसकी लम्बाई 220 सेंटीमीटर के लगभग होती है अ
280 किलोग्राम के लगभग होता है। ये किनारे से दूर ही
लेकिन गहरे समुद्र में जाने पर भोजन की कमी के कारण इन
हो जाती है। इनका मुख्य भोजन क्रिल है। इसके दांतों की
ऐसी होती है कि जब सील मछली क्रिल को दांतों के बी
लेती है तो चारों ओर से पानी बाहर निकल जाता है और क्रि
ही रह जाती है जिसे यह खा जाती है।

चीता सील भी भारी संख्या में अन्टार्कटिका महासागर
जाती है। ऐसा अनुमान है कि इस महासागर में इनकी संख्या
के लगभग होगी। चित्र 13.6 में चीता सील दिखाई गई है। न
सील की लम्बाई लगभग 280 सेंटीमीटर होती है और इसव
325 किलोग्राम होता है। मादा की लम्बाई लगभग 291 र
होती है और वजन 367 किलोग्राम तक होता है। इन मछ
मुख्य भोजन छोटे पेंगुइन पक्षी हैं जिन्हें यह किनारों पर आ
पकड़ लेती है।

अन्टार्कटिका में रॉस नामक सील मछली भी मिलती है
इसके विषय में अधिक जानकारी नहीं है। ऐसा अनुमान है
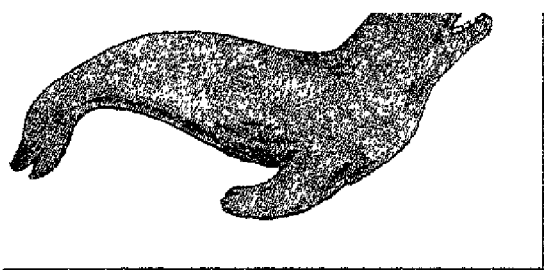
चित्र 13.6 : अंटार्कटिका चीता सील

संख्या लगभग 2 लाख होगी। इस सील का आविष्कार जेम्स
ांस ने किया था। इसी से उनके नाम पर इसका नाम रॉस
.. गया।
मछली की आंखें काफी बड़ी होती हैं और इनका व्यास
टर तक होता है। इनका रंग गहरा भूरा होता है तथा ऊपर
: सफेद होती है। इनके फिन गहरे रंग के होते हैं। ऐसा
किसी सील का नहीं होता। स्क्विड इस मछली का सामान्य
ोता है।
टार्कटिका के वेडल सील में नर की लम्बाई 297 सेंटीमीटर
इन सीलों का वजन 400-500 किलोग्राम तक होता है। ऐसा
है कि इनकी संख्या लगभग 10 लाख होगी। यह मुख्य रूप
मछलियां खाती है। यह पानी के अन्दर अधिक समय तक
ो। यह समुद्र के किनारे दक्षिण में सबसे दूर पाया जाने वाला
नधारी जन्तु है।
ी सील भी अन्टार्कटिका का एक जाना-माना जन्तु है। इसकी
50 सेंटीमीटर और वजन 4000 किलोग्राम होता है। नर सील
ाई और वजन मादा सील से अधिक होता है। ऐसा अनुमान
न मछलियों की संख्या 6 लाख के लगभग है। इनकी आंख
झिल्ली होती है जो गहरे पानी में भोजन खोजने में सहायता
। इनका मुख्य भोजन स्क्विड है।
टार्कटिका में पाई जाने वाली फर सील की लम्बाई 200

सेंटीमीटर होती है और वजन 125 से 200 किलोग्राम तक होता है। इनके फर होते हैं इसीलिए इन्हें फर सील कहा जाता है। इन्हीं फरों से इन मछलियों को गर्मी प्राप्त होती है। अन्टार्कटिका महासागर में इनकी संख्या लगभग 2 लाख है और इनका भोजन क्रिल है। ये छोटी-छोटी मछलियां भी खा लेती हैं।

अन्टार्कटिका महासागर में व्हेल भी पाई जाती हैं। व्हेल एक स्तनपायी जीव है। शुरू-शुरू में व्हेल का शिकार करते हुए शिकारी दक्षिण की ओर बढ़ते चले गए और व्हेल की खोज में अन्टार्कटिका महाद्वीप तक जा पहुंचे।

अन्टार्कटिका महासागर में आज भी व्हेल बहुत बड़ी तादाद में पाए जाते हैं। पिछले कुछ दशकों में इनका बड़ी बेरहमी से शिकार किया गया इसीलिए इनकी संख्या काफी कम हो गई है। ब्ल्यू व्हेल जो धरती का सबसे विशालकाय जीव है अन्टार्कटिका महासागर मे पाया जाता है। चित्र 13.7 में एक ब्ल्यू व्हेल दिखाई गई है। यह 30 मीटर लम्बी और इसका वजन 150 टन तक होता है। व्हेल की जीभ ढाई टन की होती है। स्पर्म व्हेल, मिंक व्हेल, साई व्हेल, कुब्जा व्हेल और फिन व्हेल भी अन्टार्कटिका महासागर में पाई जाती हैं।

चित्र 13.7 : व्हेल

अधिक शिकार के कारण अन्टार्कटिका महासागर में व्हेलों की संख्या कम हुई है लेकिन पेंगुइनों की संख्या बहुत बढ़ी है। इसका कारण यह है कि व्हेल भी उन जन्तुओं को अधिक खाती है जिन्हें पेंगुइन खाते हैं।

अन्टार्कटिका महासागर में 15 प्रकार के उड़ने वाले पक्षी हैं जो मछलियां खाकर अपना गुजारा करते हैं। अन्टार्कटिका महासागर के

क्षेत्रों में 40 प्रकार के पक्षी पाए जाते हैं। इनमें एलबेट्रास,
ौआ, स्कूआ, गुल आदि मुख्य हैं। एलबेट्रास और समुद्री कौआ
र ही आश्रित रहते हैं लेकिन प्रजनन के लिए उन्हें धरती
ा पड़ता है। अन्टार्कटिका महासागर में एलबेट्रास की 6
मिलती हैं। इन प्रजातियों में घुमक्कड़ और रॉयल एलबेट्रास
में सबसे बड़े होते हैं। इनके पंख काफी लम्बे समय के बाद
हैं और ये धीरे-धीरे वयस्क होते हैं। इन पक्षियों में 14 वर्ष
न क्रिया होती है। इनकी उम्र 80 से 85 वर्ष तक होती है।
2 वर्ष में एक बार प्रजनन करते हैं। धूसर सिर वाला एलबेट्रास
ल छोड़कर प्रजनन करता है। इसके भोजन का आधा भाग
ोता है।

क्कड़ एलबेट्रास विशाल आकार के उड़ने वाले पक्षियों के वर्ग
है। इनके पंखों का विस्तार 3.5 मीटर होता है। इस पक्षी
भारी तथा लम्बी होती है और पंख लम्बे व पतले होते
पक्षी लम्बी दौड़ लगाकर उड़ान भरता है और फिर उड़ान
जित करता है।

ुद्री कौआ आमतौर पर सागर के तटों पर प्रजनन करते
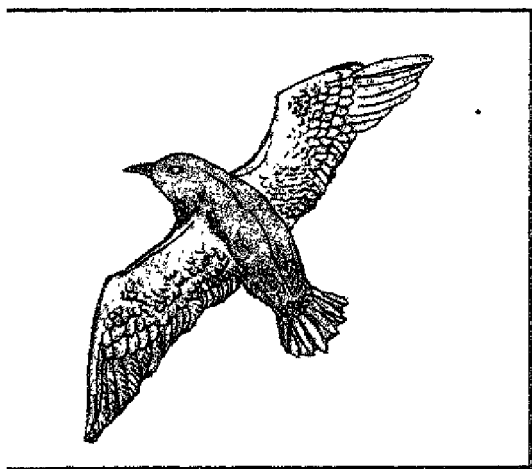
चित्र 13.8 : स्कूआ

है इस जाति के कुछ बर्फीले कौआ और समुद्री कौआ अन्टार्कटिका महाद्वीप के समुद्री किनारों पर प्रजनन करते हैं।

चित्र 13.8 में स्कूआ नामक पक्षी दिखाया गया है। यह पक्षी भी अन्टार्कटिका में पाया जाता है। ये पक्षी इस महासागर में मानव की बिना मदद के पहुंचे हैं। यह लंबी उड़ान भर सकता है। इसके पंखों का फैलाव 1.3 मीटर होता है। यह पक्षी पेंगुइनों के अण्डे, उनके छोटे-छोटे बच्चे और क्रिल खाता है।

इन जन्तुओं के अतिरिक्त अन्टार्कटिका में और बहुत से जन्तु भी पाए जाते हैं। वहां पर बहुत सारे कीड़े-मकोड़े पाए जाते हैं जो खाद्य शृंखला को पूरा करते हैं। अन्टार्कटिका में पाए जाने वाले कीड़े-मकोड़े चित्र 13.9 में दिखाए गए हैं। अन्टार्कटिका का समस्त जीवजगत चित्र 13.10 में दिखाया गया है।
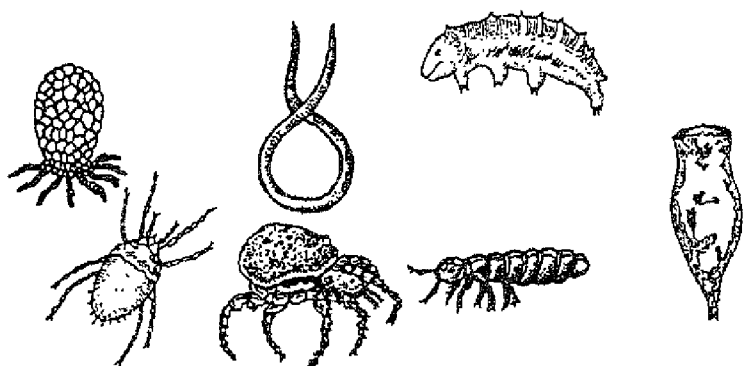
चित्र 13.9 : अन्टार्कटिका के कीड़े-मकोड़े

अन्टार्कटिका महासागर की वनस्पति

अन्टार्कटिका महासागर का जितना बड़ा जन्तुजगत है वहां का वनस्पति जगत भी कम नहीं है। इस क्षेत्र में धरती पर लाइचिन की 200 प्रजातियां, मौस की 85 प्रजातियां, सूक्ष्म फंगी की 29 प्रजातियां, हैप्टिक की 25 प्रजातियां और एलगी की बहुत-सी प्रजातियां पाई जाती है। इस प्रदेश में फूलों वाले पौधे भी पाए जाते हैं। एलगी, लाइचिन,
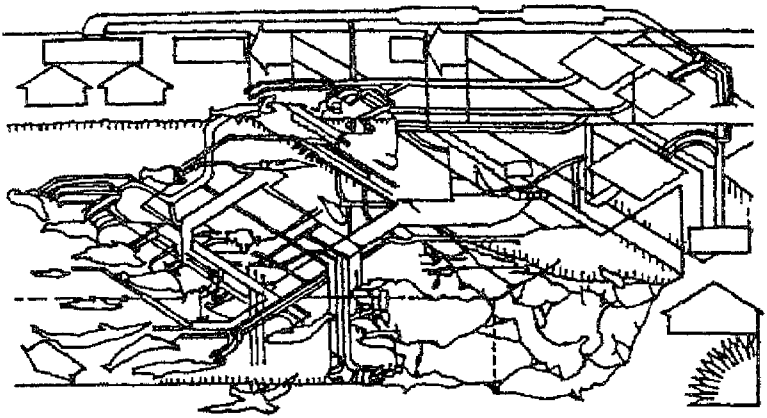
चित्र 13.10 : अन्टार्कटिका का जीवजगत

मौस आदि अन्टार्कटिका के सरल पौधे हैं। अन्टार्कटिका प्रदेश में लाइचिन की मात्रा सबसे अधिक है। वास्तव में इसमें 1 पौधे में 2 पौधे होते हैं। (चित्र 13.11) इनमें से एक पौधा एलगी होता है और दूसरा फंगी होता है। एलगी प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कर सकता है और फंगी यह क्रिया नहीं कर सकता। फंगी एलगी की कोशिकाओं को चट्टानों से बांधे रखता है।

फंगी में मौजूद रेशे एलगी को पानी की अच्छी मात्रा देते हैं। लाइचिन की फंगी एक ऐसा पदार्थ निकालती है जो चट्टानों को घोल लेता है। ऐसा करने से लाइचिन पदार्थ की वृद्धि के लिए आवश्यक खनिज पदार्थ मिल जाते हैं। ये सभी क्रियाएं बड़ी धीमी होती हैं। इनके बढ़ने की दर इससे ज्ञात की जा सकती है कि यदि लाइचिन धरती पर सबसे पुरानी वस्तु होती तो इसकी चौड़ाई केवल 5 इंच होती। कुछ प्रयोगशालाओं में किए गए प्रयोगों से पता चलता है कि 15 साल तक लगातार पानी देने से भी ये पौधे जिन्दा रहते है। कुछ लाइचिन ऐसे रसायन पैदा करते हैं जो चट्टानों को तोड़-तोड़कर मिट्टी के कणों में बदल देते हैं।

अन्टार्कटिका में जहां लाइचिन पौधों ने धरती पर एक पतली

बना ली है वहां अक्सर मौस उगते हैं। ये पौधे
यह अलग-अलग भी पाए जाते हैं और एक साथ
यह पौधे ढलानदार जमीन पर अधिक मात्रा मे उ
न से 20-30 सेंटीमीटर की गहराई तक पानी प्राप्त क
पौधे ज्वालामुखी चट्टानों पर भी उगते हैं।

चित्र 13.11 : अंटार्कटिका के पौधे

मौस पौधा काफी सख्त नहीं होता है। सूखी चट्
से ही इनके टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। चित्र 13.12
पौधा दिखाया गया है। अन्टार्कटिका में यह पौधा
जैसा नहीं मिलता। नमी वाले क्षेत्रों में यह 85 प्
घेरे हुए है जबकि सूखे स्थानों में यह केवल 5 प्
घेरे हुए है। इसकी वृद्धि बहुत कम होती है। इस
गद्देनुमा होते हैं जिनकी ऊंचाई 5 सेंटीमीटर और
मीटर होती है। कुछ मौस की प्रजातियों की, लाइचिनों
बढ़ने से, जनसंख्या की वृद्धि में रुकावट आ जा

चित्र 13.12 : मौस के पौधे का तना

के चित्र 13.13 में दिखाया गया है। कई प्रकार की एलगी अन्टार्कटिका
गर काफी संख्या में पाई जाती हैं। किनारे वाले क्षेत्रों में इन पौधे

चित्र 13.13 : मौस की वृद्धि में लाइचिन और एलगी द्वारा रुकावट (काली रेखाएं रुकावट दिखाती हैं)

की संख्या बहुत ज्यादा है। नौस्टॉक प्रजाति कई क्षेत्रों में बहुत अधिक पाई जाती है। इस एलगी के पौधे 5 सेंटीमीटर व्यास के हो सकते हैं और एक-दूसरे से 10 से 20 सेंटीमीटर के फासले पर होते हैं।

अन्टार्कटिका में बर्फ से रहित जमीन की जैसे-जैसे ऊंचाई बढ़ती है वैसे ही वनस्पति की संख्या कम होती जाती है। माइक्रोफाइटिक वनस्पति में कमी वाले स्थानों पर बैक्टीरिया, एलगी, फंगी, लाइचिन आदि जानवरों के लिए सहायक होते हैं।

अन्टार्कटिका महासागर में फूल वाले पौधों की 3 प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें से दो घास की हैं और तीसरी कार्नेशन की है जो पामीर पठार पर मिलती है। घास वाले पौधे एक गठी हुई 25 सेंटीमीटर चौड़ी झाड़ी के रूप में मिलते हैं। ये पौधे खासतौर से कम ठंडे भागों में मिलते हैं।

अन्टार्कटिका के किनारों तथा ढलान वाले क्षेत्रों में पानी की मात्रा बढ़ जाती है इसीलिए वहां छोटी-छोटी प्रजातियों के क्षेत्र मिलते हैं।

ऐसा अनुमान है कि पारिस्थितिक तन्त्र में अन्टार्कटिका में सबसे पहले एलगी और धरती पर सूक्ष्म जीवों का विकास हुआ। इसके बाद लाइचिनों की उत्पत्ति हुई।

अन्टार्कटिका महासागर में पाई जाने वाली वनस्पति वहां की खाद्य शृंखला का मुख्य आधार है। इस क्षेत्र के जन्तु वनस्पति को खाकर जीवित रहते हैं। अन्टार्कटिका के अनेक क्षेत्रों में वैज्ञानिकों को अभी वनस्पतियों के विषय में और जानकारी प्राप्त करनी है।

अध्याय 14

अन्य समुद्री संसाधन

पिछले अध्यायों में हमने समुद्र से प्राप्त होने वाले खाद्य पदार्थों, खनिज सम्पदा, नमक, पैट्रोलियम और गैस, रेडियोधर्मी तत्व, ऊर्जा, वर्षा आदि का विवरण दिया है। इन पदार्थों के अतिरिक्त हमें समुद्र से मोती, स्पंज, जन्तुखोल, सीपियों की खेती, ब्रोमीन और दूसरे अनेक पदार्थ मिलते हैं। सागर हमारे लिए मनोरंजन का भी क्षेत्र बन चुके हैं। इन सबके विषय में इस अध्याय में विवरण दिया गया है।

(1) सागरों से मोती—मोती, रत्नों की श्रेणी में आता है। मोतियों को महिलाएं हार बनाने, अंगूठियों में लगाने और कान के आभूषणों में प्रयोग करती हैं।

मोती का निर्माण ओयस्टर या घोंघा नाम के समुद्री जीव के शरीर में होता है। ओयस्टर के शरीर में जब कोई बालू का कण अन्दर चला जाता है तो ओयस्टर इस कण के ऊपर सीप जैसे पदार्थ की परत चढ़ाता चला जाता है। यह परत कैल्शियम कार्बोनेट पदार्थ की होती है। थोड़े समय में ही ओयस्टर के अन्दर मोती बन जाता है। ओयस्टर जीव में मोती बनने की क्रिया चित्र 14.1 में दिखाई गई है।

मोती गोल और सफेद होता है। कुछ मोती काले और गुलाबी रंग के भी होते हैं। ओयस्टर की जीवनलीला खतरों से भरी होती है। समुद्र में इसे मछलियां खा जाती हैं और समुद्र के बाहर इसे आदमी खा जाता है।
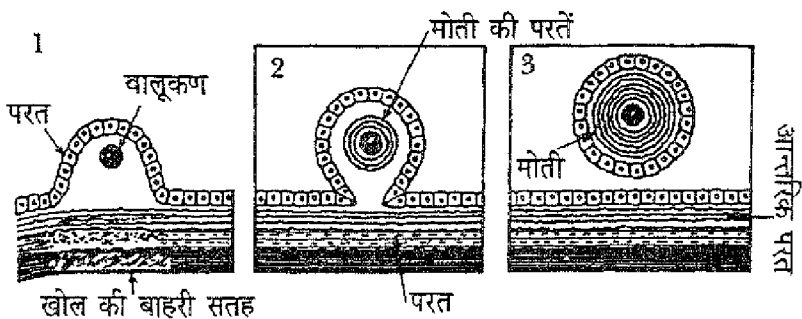
चित्र 14.1 : मोती बनने का क्रम

मोती की खोज की कहानी बड़ी मनोरंजक है। अब से लगभग 4000 वर्ष पहले की बात है जब एक चीन के व्यक्ति को बहुत भूख लगी थी। भूख मिटाने के लिए उसने समुद्र के किनारे से कुछ सीपियां इकट्ठी कीं और उनसे घोंघा प्राप्त करने के लिए उन्हें खोला। एक सीप के अन्दर से एक चमकदार गोल चीज निकली और इसी का नाम मोती रख दिया।

मोती का आकार छोटे से लेकर बहुत बड़ा तक होता है। मोती का आकार जितना बड़ा होगा और गोल होगा उतना ही उसका मूल्य अधिक होगा। संसार के सबसे बड़े मोती का वजन 300 ग्राम है।

आजकल कल्चर विधि से मोतियों का निर्माण किया जाता है। इस विधि में सीपी के अन्दर कृत्रिम तरीके से बालू का छोटा-सा दाना प्रविष्ट करा देते हैं। इसी पर मोती बन जाता है। चित्र 14.2 मे सीप में एक मोती दिखाया गया है।

चित्र 14.2 : सीप में मोती

(2) **सीपियों की खेती**—सीपियों की खेती एक नया प्रयास है। सीपियों को लगभग 5 प्रतिशत लोग बड़े चाव से खाते हैं। विभिन्न

प्रकार की सीपिया समुद्र मे पाई जाती है इन सीपियो मे क्लैम मसल और ओयस्टर मुख्य हैं। सीपियां मौलस्क श्रेणी के जन्तु हैं। हरे रंग की सीपियां सबसे स्वादिष्ट मानी जाती हैं। महाराष्ट्र, गोवा, कर्नाटक, केरल आदि में सीपियां भारी संख्या में मिलती हैं। बरसात के दिनों में जब समुद्र से मछली पकड़ना बन्द हो जाता है तो तटीय प्रदेशों में सीपियों की खेती की जाती है। हमारे देश में लगभग 200 से 300 टन सीपियां आजकल पैदा होती हैं।

सीपियों से खाद्य की अधिक उपज होती है। यह प्रोटीन की कमी पूरी करती हैं। इनसे ग्रामीण जनता को रोजगार मिलता है।

सीपियों की खेती में भी मोती पैदा किए जाते हैं। जापान इसका एक जीता-जागता उदाहरण है।

सीपियों की खेती मुख्य रूप से चार तरीकों से की जाती है—

(1) लकड़ी के रैफ्ट द्वारा खेती

(2) लम्बी रस्सियों द्वारा खेती

(3) नाइलॉन के थैलों द्वारा खेती और

(4) समुद्र तलीय खेती

इस खेती का चलन दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। तटीय क्षेत्रो मे लगभग सत्रह लाख हेक्टेयर में हरी सीपियों की खेती की जाती है।

(3) मूंगा—मूंगा भी एक समुद्री जीव है। इसे कोरल कहते हैं। यह सख्त प्यालेनुमा रचना में रहता है। कोरल की विशाल बस्तियां होती हैं जो कोरल रीफों का निर्माण करती हैं। जब जीव मर जाता है तो सख्त प्यालानुमा रचना रह जाती है जिसे हम मूंगा कहते हैं। मूगे का प्रयोग मानव अंगूठियों में करता है। ये कई रंग के होते हैं। इनमें लाल और सन्तरी रंग के मूंगे लोगों को बहुत भाते हैं।

(4) स्पंज—स्पंज भी एक प्रकार के समुद्री जीव हैं जिनमें अनेक छेद होत हैं। स्पंज में पानी सोखने का गुण होता है। बाजार में जो स्पज मिलते हैं वह पूर्ण रूप से समुद्री जीव नहीं होते। स्पंजों को बाथरूम में प्रयोग किया जाता है। ये बड़े मुलायम होते हैं।

अधिकतर स्पंज कटिबंधीय सागरों में मिलते हैं। इनका आकार

. सेंटीमीटर से लेकर 2 मीटर तक होता है। सागरो
बडी बस्तियां होती हैं।

(5) **समुद्री घास**—समुद्री घास को अंग्रेजी
(Seaweed) कहते हैं। यह एक प्रकार की एलगी
केस्में होती हैं। कुछ एलगी कत्थई रंग की होती हैं
रंग की। इनमें से कुछ की लम्बाई 60 मीटर तक
4.3 में समुद्री घास दिखाई गई है।

समुद्री घास के बहुत से उपयोग हैं। इसे आइस
प्रयोग किया जाता है जिससे बर्फ के रवे नहीं बनते।
की सीवीड से अगर-अगर नामक पदार्थ तैयार किय
बेक्टीरियाओं के कल्चर के लिए प्रयोग किया जात
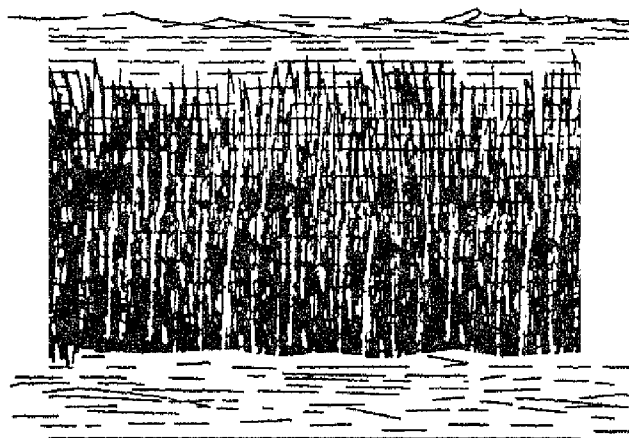
चित्र 14.3 : समुद्री घास

समुद्री घास आयोडीन बनाने में प्रयोग की जार्त
बहुत ही उपयोगी तत्व है।

समुद्री घास को खाद के रूप में भी प्रयोग
कुछ विशेषज्ञों का विश्वास है कि आने वाले वर्षों में स
ा काम करेगी।

(6) **समुद्री शैवाल**—समुद्री शैवाल एक प्रकार
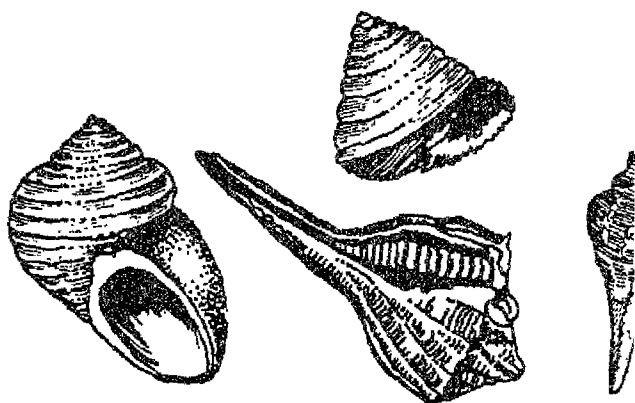
चित्र 14.4 : समुद्री जीवों के कुछ खोल

(8) गुरु या भारी जल—भारी जल को अंग्रेजी
(Heavy Water) कहते हैं जो परमाणु रिएक्टरों में प्र
यह पानी सागरों से ही प्राप्त किया जाता है। सागर के 6
मे एक परमाणु ड्युटेरियम का होता है। ड्युटेरियम क
ऑक्सीजन से संयोग करके भारी पानी बनाता है।

सारे संसार में भारी पानी निर्माण करने वाले ब
लगे हुए हैं। इन प्लान्टों से सभी जगह पानी का निर्मा
है। हमारे देश में परमाणु रिएक्टरों की आवश्यकताएं
लिए नागल, बड़ोदरा, तूतीकोरिन, तलचर, कोटा, अजीर
पर भारी पानी का निर्माण किया जा रहा है।

(9) सागरों से रसायन—यह देखा गया है वि
कार्बनिक पदार्थों से बने होते हैं। इनके मरने पर व
पानी में घुल जाते हैं। पानी में बहुत से विटामिन भी
इन कार्बनिक पदार्थों की मात्रा समुद्री जीवों में उपा
पदार्थों की तुलना में 300 गुना अधिक होती है। इनसे
प्राप्त करना आसान कार्य है।

सागरों के जल से ब्रोमीन, मैगनीशियम, पोटाशिय
धातुएं भारी मात्रा में प्राप्त की जाती हैं। एक तरह
हमारे लिए धातुओं और खनिजों का भण्डार है।

(10) समुद्र के पानी मे घुली गैसे—सागर के जल मे बहुत-सी गैसें घुली हुई रहती हैं। मुख्य रूप से नाइट्रोजन, ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड सागर के पानी में घुली हुई मिलती हैं। इनमें से नाइट्रोजन 64 प्रतिशत होती है। वायुमंडल में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन होती है। सागरों में 34 प्रतिशत ऑक्सीजन होती है जबकि वायुमंडल में 21 प्रतिशत ऑक्सीजन घुली हुई अवस्था में होती है। ऑक्सीजन का उपयोग समुद्री जीव जीवित रहने के लिए करते हैं। समुद्र के पानी में कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा वायुमंडल की तुलना में 50 गुना अधिक है। कार्बनडाइऑक्साइड गैस समुद्री वनस्पतियों द्वारा प्रकाश सश्लेषण की क्रिया में काम आती है।

(11) सागरों से यातायात—मानव सभ्यता के विकास से लेकर आज तक सागर हमारे यातायात का महत्वपूर्ण साधन रहे हैं। आज भी सागरों की छाती पर तैरते हुए जलयान दुनियाभर की यात्रा करते हैं और व्यापार में बहुत बड़ा सहयोग देते हैं। इन्हीं जलयानों से एक देश का माल दूसरे देशों में भेजा जाता है। तेल के विशाल टैंकर सागरों के जल में तैरते हुए एक देश से दूसरे देश में तेल ले जाने का कार्य करते हैं।

प्राचीनकाल में कोलम्बस, वास्कोडिगामा, जेम्सकुक, मार्कोपोलो, एमन्डसन आदि खोज यात्रियों ने जल-मार्ग से नए-नए स्थानों का पता लगाया और हमारे ज्ञान में विशाल वृद्धि की। इस प्रकार सागरों ने मानव सभ्यता के ज्ञान में विशाल योगदान दिया है।

(12) सागरों में मनोरंजन—सागरों के किनारों पर तो मानव न जाने कब से तैरने का आनन्द ले रहा है। आज सागरों को मनुष्य खेलों के लिए भी प्रयोग कर रहा है। सागर की लहरों पर तैरना एक साहस भरा खेल है। इसे दुनिया के खिलाड़ी खेलते हैं। फिशिंग करना मानव के लिए एक खेल बन गया है।

अध्याय 15

समुद्री विचित्रताएं

समुद्री संसाधन जितने मानव के लिये उपयोगी हैं उससे कहीं अधिक सागर के जीव-जन्तुओं की विचित्रतायें हैं। इन विचित्र जीव-जन्तुओं को देखकर मानव हैरत में पड़ जाता है। इस अध्याय मे समुद्री जीव-जन्तुओं की विचित्रताओं का विवरण दिया है तथा उनकी उपयोगिताओं के विषय में प्रकाश डाला गया है।

(1) उड़ने वाली मछलियां—पक्षियों के उड़ने की बात तो सर्वविदित है लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि सागरों में कुछ उड़ने वाली मछलियां भी होती हैं। इन मछलियों को फ्लाइंग फिश (Flying Fish) कहते हैं। ये मछलियां पहले पानी में तेजी से दौड़ती हैं उसके बाद अगले फिन्स फैलाकर हवा में उड़ने लगती हैं।
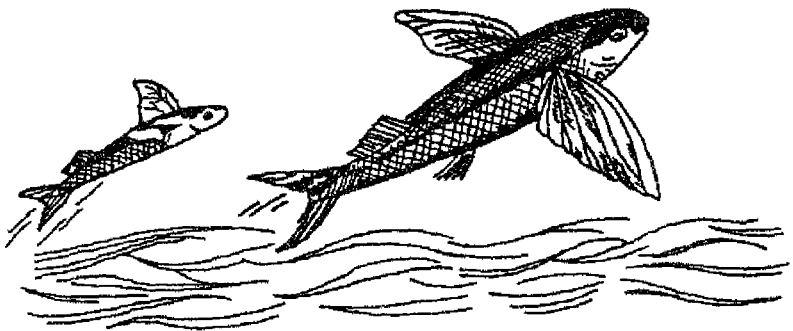
चित्र 15.1 : उड़ने वाली मछलियां

ाछलिया तो हवा मे 365 मीटर लम्बी उड़ान भरती देखी
की लम्बाई 5 से 45 सें.मी. तक होती है। चित्र 15.1
ने वाली मछलियां दिखाई गई हैं। कभी-कभी यह मछली
उड़ जाती हैं कि समुद्री जहाजों के डेक पर पहुंच जाती
लाभ जहाज के यात्रियों को होता है। इससे जहाज के
ताजी मछली खाने के लिये मिल जाती है। इनकी संख्या
ाफी कम होती है इसलिए ये समुद्रों में देखने को कम
इन्हें उड़ता देखकर लोग आश्चर्य में पड़ जाते हैं।

बिजली पैदा करने वाली मछलियां—सागरों में कई प्रकार
ऐसी होती हैं जो बिजली पैदा करती हैं। ये मछलियां
और भोजन प्राप्त करने के लिए बिजली पैदा करती हैं।
क ईल, कैट फिश, तारपीडो रे आदि ऐसी मछलियां हैं
पैदा करती हैं। इलैक्ट्रिक ईल सबसे खतरनाक होती है।
ई 1.8 मीटर तक होती है। इसकी पूंछ में विद्युत पैदा
अंग होते हैं। ये मछलियां एक एम्पीयर पर 400 वोल्ट
जली पैदा करती हैं। कैट फिश, जो बिजली पैदा करती
लम्बाई 1.2 मीटर तक होती है। तारपीडो तीसरी बिजली
वाली मछली है जिसकी लम्बाई 1.5 मीटर तक होती है।
90 किलोग्राम तक होता है। इसके बिजली पैदा करने
र और गिल्स के बीच में होते हैं। चित्र 15.2 में बिजली
वाली मछली दिखाई गई है।
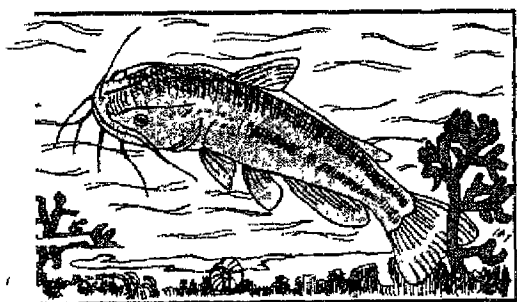
चित्र 15.2 : बिजली पैदा करने वाली कैट फिश

इन मछलियों को लोग खाने में भी प्रयोग करते है

(3) आदमी की नकल करने वाला समुद्री प्राणी—साग
प्राणी ऐसे मिलते हैं जिन्हें पोरपोइज़ (Porpoise) कहते हैं।
आदमी की बहुत-सी बातों की नकल कर लेते हैं। इनकी
मछलियों जैसी होती है। लेकिन यह मछलियों की श्रेणी में न
ये स्तनधारी जीव हैं जो बच्चे पैदा करती हैं और उन्हें दूध
हैं। व्हेल, डॉलफिन और पोरपोइज़ तीनों ही समुद्री जीव स्त
की श्रेणी में आते हैं।

पोरपोइज़ और डॉलफिन मानव के साथ मित्रों की तरह
आए हैं। ये दूसरे जानवरों की तुलना में बहुत चतुर प्राणी है
लम्बाई 1.75 मीटर तक होती है तथा वजन काफी अधिक
इनके मुंह में 80 से 100 दांत होते हैं। ये जीव मानव को देख
की तरह ही हंसने लगते हैं। ये हमारी जैसी आवाज पैदा
हैं। डॉलफिन 10 महीने के गर्भाधान के बाद में बच्चा पैदा

पोरपोइज़ के सिर और जबड़ों से एक प्रकार का तेल
जाता है जो घड़ियों और दूसरे कीमती यंत्रों में चिकनाहट
के लिए काम आता है। चित्र 15.3 में यह जीव दिखाया
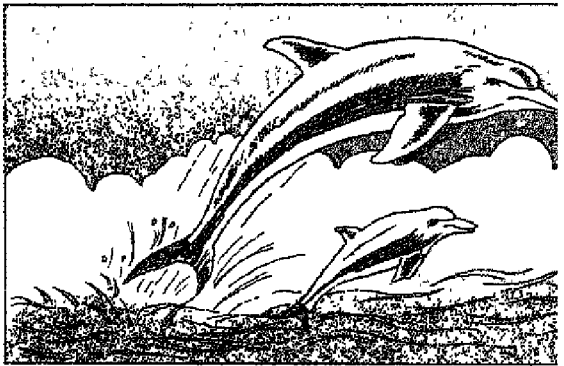
चित्र 15.3 : पोरपोइज़

(4) व्हेल—व्हेल देखने में तो मछली जैसी लगती है ले
एक स्तनधारी प्राणी है। मांस खाने के लिए मानव ने इसक
बेरहमी से किया। यह धरती का सबसे बड़ा जन्तु है। इसन

ती है और भार 125 टन होता है। इसकी पूंछ की
ोती है। इसकी मांसपेशियों का वजन 50 टन और
टन होता है। इसकी जीभ ढाई टन की होती है।
कोई दूसरा जीव धरती पर नहीं है।
ैदा करती है और उन्हें दूध पिलाती है। इसका मांस
ाता है। चित्र 15.4 में एक व्हेल दिखाई गई है।
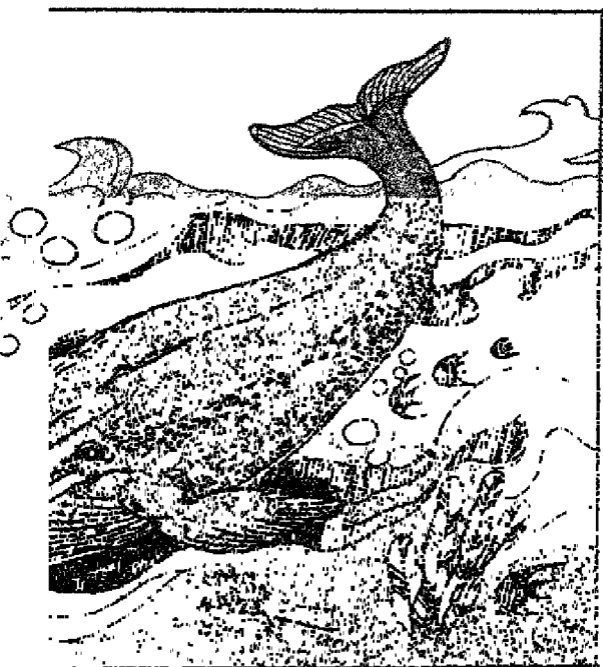
चित्र 15.4 : ह्वेल

घोड़ा—यह एक प्रकार की मछली होती है जिसका
ता-जुलता है। चूंकि इसका सिर घोड़े से मिलता-जुलता
मुद्री घोड़ा कहते हैं। इस मछली की पूंछ सांप जैसी

में एक समुद्री घोड़ा दिखाया गया है। इसका आकार
सें. मी. तक होता है। इनका रंग भी अलग-अलग
न इनकी शक्ल एक जैसी होती है। इनकी लगभग

100 प्रजातिया है जो सफेद, पीले, लाल और नीले रंग मे हो सकती है

चित्र 15.5 : समुद्री घोड़ा

ये मछलियां चित्र की भांति तैरती हैं। मादा अंडे देती है। अंडे से बच्चे निकलने के बाद थैली में लगभग 5 सप्ताह तक बड़े होते हैं। इन्हें लोग भोजन के रूप में खाना बहुत कम पसन्द करते हैं। इन्हें समुद्री जीव भी बहुत कम खाते हैं इसलिए इन्हें कोई खतरा नहीं रहता है।

(6) प्रकाश पैदा करने वाली मछलियां—कुछ मछलियां सागर में प्रकाश भी पैदा करती हैं। यह बात कुछ अटपटी-सी लगती है लेकिन यह सत्य है कि कुछ मछलियां प्रकाश भी पैदा करती हैं।

इनसे पैदा होने वाले प्रकाश को जैविक संदीप्ति कहते हैं। समुद्रों में कुछ बैक्टीरिया प्रकाश पैदा करते हैं लेकिन एन्गलर फिश और लैन्टर्न फिश भी प्रकाश पैदा करती हैं। ये मछलियां चित्र 15.6 में दिखाई गई हैं। एन्गलर फिश में प्रकाश पैदा करने वाले अंग उसके मुंह में होते हैं। लैन्टर्न फिश द्वारा प्रकाश एक विशेष पैटर्न में पैदा होता है। प्रकाश पैदा करने वाली क्रिया के आधार पर सागरों में इनके भंडारों का पता लगाया जा सकता है।
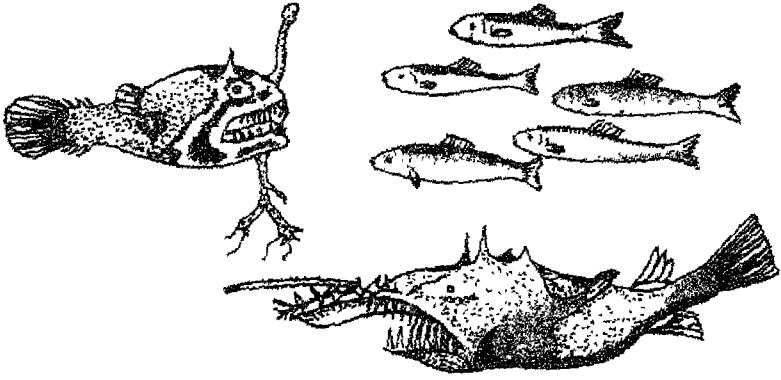
चित्र 15.6 : प्रकाश पैदा करने वाली मछलियां

(7) मुंह में अंडे रखने वाली मछली—कैट फिश नामक मछली एक ऐसी विचित्र समुद्री मछली है जो अपने अंडे मुंह में रखती है। यह कार्य नर मछली करती है जबकि मादा मछली अंडे देती है और नर उन्हें मुंह में रख लेता है। इन अंडों की संख्या इतनी अधिक होती है कि नर का मुंह भर जाता है। कैट फिश सात प्रकार की होती हैं जिनमें से कुछ फ्लैट हैड कैट फिश होती हैं और कुछ नीली कैट फिश होती हैं। इनका वजन 45 किलोग्राम तक होता है। इन मछलियों का मुंह बिल्ली से मिलता-जुलता है इसीलिए इन्हें कैट फिश कहते हैं। चित्र 15.7 में यह कैट फिश दिखाई गई है।
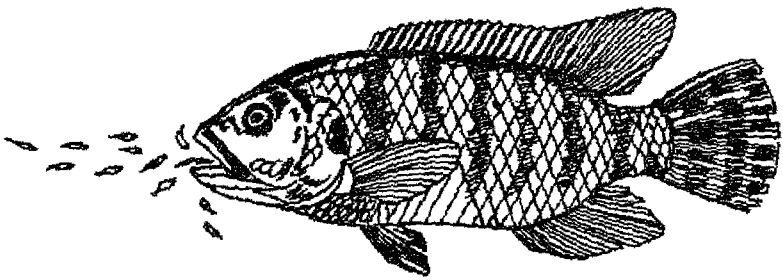
चित्र 15.7 : कैट फिश

इसका आकार 9 फुट लम्बाई तक होता है। ये मछलियां सागरो और साफ पानी दोनों में मिलती हैं।

(8) थूकने वाली मछली—कुछ मछलियां ऐसी होती हैं जो अपने शिकार पर थूककर उन्हें पकड़ती हैं। इन मछलियों को आरकर फिश कहते हैं। यह मछली किसी समुद्री पौधे पर लटके हुए कीड़े पर 2 मीटर की दूरी तक थूककर उन्हें पानी में गिरा देती है। जैसे ही कीड़ा पानी में गिरता है मछली उस पर तेजी से झपटती है और उसे पकड़ लेती है।
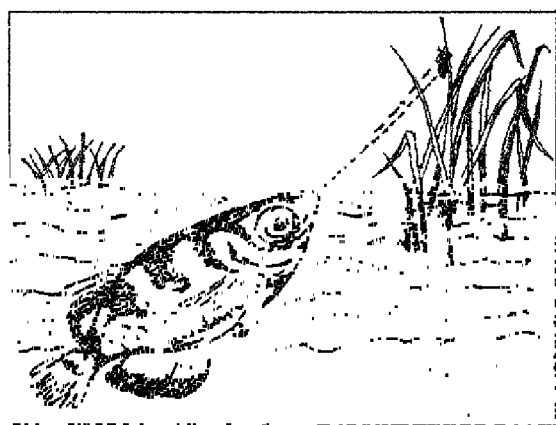
चित्र 15.8 : आरकर फिश

यह मछली ताजा पानी में रहती है। चित्र 15.8 में एक आरकर फिश दिखाई गई है। इसकी लम्बाई 18 सेंटीमीटर तक होती है। इस मछली की पांच किस्मों का अध्ययन किया जा चुका है। ये मछलिया कीड़े-मकोड़े खाकर ही जिन्दा रहती हैं।

(9) समुद्री गाय—धरती की गाय तो हम सबने देखी है लेकिन समुद्री गाय की बात सुनने में कुछ अटपटी लगती है। समुद्री गाय समुद्र में रहने वाला स्तनपायी प्राणी है जो अंडे न देकर बच्चे देता है।

इस जीव की चार किस्में होती हैं। एक किस्म को डुगोंग कहते हैं और दूसरी 3 किस्मों को मैनाटीज़ कहते हैं। इनकी लम्बाई 15 फुट तक होती है और वजन 500 पौंड तक होता है। सामान्यतः

ह घास खाती है। चित्र 15.9 में समुद्री गाय दिखाई गई हैं।

चित्र 15.9 : समुद्री गाय

(10) सागरों की कुछ और विचित्रताएं—यह देखा गया है कि जैस प्रकार धरती की सतह पर भूकम्प आते हैं उसी प्रकार समुद्र ाल में भी भूकम्प आते हैं और ज्वालामुखी फटते हैं। समुद्र तल ें आने वाले भूकम्पों और ज्वालामुखियों से पानी में कम्पन पैदा हो ाती है। कभी-कभी बहुत बड़े भूकम्प आते हैं। सन् 1883 मे कैकाटोआ में एक विशाल ज्वालामुखी फटा था। इसी प्रकार ईस्ट इंडीज ें भी एक ज्वालामुखी फटा था।

जैसे धरती की सतह पर पहाड़ होते हैं वैसे ही सागर की सतह र भी पहाड़ होते हैं। अब तक 2000 से अधिक पहाड़ों का पता गाया जा चुका है। मोनाकी पर्वत समुद्र की तली पर ऐसा पर्वत है कि समुद्र के तल से इसकी ऊंचाई 9686 मीटर है। इसे हम विश्व का सबसे ऊंचा पहाड़ मान सकते हैं। (चित्र 15.10)

इस प्रकार हम देखते हैं कि सागरों की अनेक विचित्रताएं हैं।
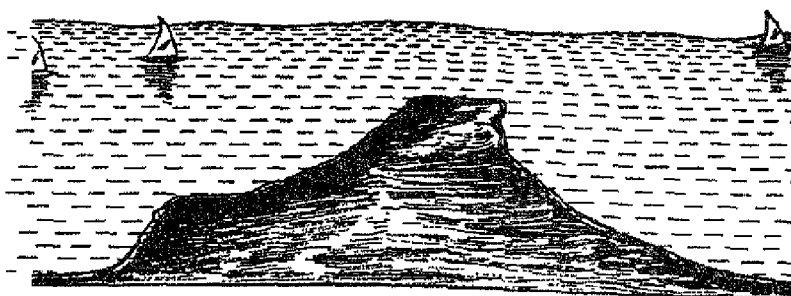
चित्र 15.10 : समुद्र की तली पर एक पर्वत

अध्याय 16

भारत में सागर विज्ञान

भारत में सागर विज्ञान को उस समय से जोड़ा जा सकता है जब देवताओं और राक्षसों में युद्ध हुआ था और सागर मंथन किया गया था। सागर मंथन द्वारा सागर से अमृत प्राप्त करने की योजना थी। इस पारंपरिक कथा के अनुसार सागर मंथन के लिये सुमेरू पर्वत की मथनी बनाई गई और शेषनाग को मथनी घुमाने के लिये रस्सी के रूप में प्रयोग किया गया। सागर का मंथन किया गया जो एक प्रकार का सागर अन्वेषण था। इस मंथन में 14 रत्न प्राप्त हुए। इन रत्नों में कामधेनु गाय, ऐरावत हाथी, उच्चश्रवा घोड़ा, लक्ष्मी, कल्पवृक्ष, कुबेर, कालकूट विष, अमृत, रत्न आदि मानवोपयोगी उपहार प्राप्त हुए। अमृत के बंटवारे पर देवताओं और राक्षसों में भयानक युद्ध हुआ।

इस पौराणिक कथा में कितनी सत्यता है यह तो कुछ नहीं बताया जा सकता लेकिन यह निश्चित है कि हमारे सागर विभिन्न सम्पदाओं का विशाल स्रोत हैं और तभी से मानव सागरों को खोजता आ रहा है और सागर से प्राप्त उत्पादों को अपने कार्यों में प्रयोग करता आ रहा है।

महासागरों से सम्बन्धित विज्ञान को सागर विज्ञान कहते हैं। सागर विज्ञान या ओसनोग्राफी (Oceanography) को चार भागों में बांटा जाता है। ये चार भाग हैं—

(1) भौतिक सागर विज्ञान

(2) भूगर्भ सागर विज्ञान

(3) रासायनिक सागर विज्ञान

(4) जैविक सागर विज्ञान

भौतिक सागर विज्ञान के अन्तर्गत तापमान, धाराएं, ज्वार आदि का अध्ययन किया जाता है। भूगर्भ सागर विज्ञान में तटों, टापुओं और सागर की तली का अध्ययन किया जाता है। रसायन सागर विज्ञान का संबंध सागर में मिलने वाले रसायनों से है तथा जैविक सागर विज्ञान समुद्री जीव-जन्तुओं और वनस्पतियों से संबंध रखता है।

भारत देश में सागर विज्ञान के इन चारों पहलुओं का अध्ययन किया जाता है।

वैसे तो सागर विज्ञान का आरम्भ सागर मंथन के समय में ही हो गया था लेकिन वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इस विषय का अध्ययन सन् 1871 में आरम्भ हुआ। उन दिनों भारतीय संग्रहालय के डॉ. जे. वुड मैसन ने अनडोन्टेड जलयान द्वारा अण्डमान निकोबार आयलैण्ड के निकट कुछ जीवों का अध्ययन किया था। सन् 1872 में भारतीय समुद्री सर्वेक्षण विभाग ने सर्वेक्षण पोत इन्वैस्टीगेटर प्रथम बार प्राप्त किया जिसका वजन 580 टन था। उस समय हमारे देश में ब्रिटिश साम्राज्य था इसीलिए ब्रिटिश सरकार ने चेलेंजर पोत पर लगे हुए उपकरण इन्वैस्टीगेटर में फिट कराके सर्वेक्षण कार्य आरम्भ किया। सन् 1908 तक जीव-जन्तुओं का अध्ययन चलता रहा। जब इन्वैस्टीगेटर प्रथम सन् 1908 में खराब हो गया तो इन्वैस्टीगेटर द्वितीय प्राप्त किया गया। इस जलयान द्वारा समुद्री जल में घुले लवणों का अध्ययन किया गया।

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान सन् 1914 से लेकर सन् 1919 तक सागर सर्वेक्षण का कार्य रुका रहा। इसके बाद सन् 1928 से 1930 तक डाना अभियान, सन् 1933 में जॉन मारे अभियान तथा सन् 1950 से 1953 तक गालथिया अभियान चला। इन अभियानों के अन्तर्गत समुद्री जल के भौतिक गुणों और जीव-जन्तुओं का अध्ययन किया गया। सन् 1947 में भारत आजाद हुआ और देश में विज्ञान कार्यो को नई दिशा मिली। सन् 1947 में केन्द्रीय समुद्री मत्स्य अनुसंधान संस्थान तथा नौसेना भौतिक सागर विज्ञान प्रयोगशाला, कोचीन की

स्थापना की गई। सन् 1960 में संसार भर में प्रसिद्ध भूवैज्ञानिक डॉ. डी. एल. वाडिया की अध्यक्षता में सागर अनुसंधान के लिए भारत सरकार ने भारतीय राष्ट्रीय समिति की स्थापना की। इस समिति का मुख्य उद्देश्य सागर अनुसंधानों से संबंधित योजनाएं बनाकर उन्हें कार्यरूप देना था।

सन् 1960 में अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक यूनियन और यूनेस्को के तत्वावधान में अन्तर्राष्ट्रीय हिन्द महासागर अभियान आरम्भ किया गया। इस अभियान में भारत समेत 20 देशों ने भाग लिया। अन्तर्राष्ट्रीय हिन्द महासागर अभियान में 160 भौतिक शास्त्री, रसायन शास्त्री और भूविज्ञान जानने वाले विशेषज्ञ थे। इस कार्य के लिए देश के पास कृष्णा फ्रिगेट, वरुण, कोच और बंगवा अनुसंधान पोत भी थे।

सन् 1962 में कोचीन में हिन्द महासागर जीवशास्त्रीय केन्द्र स्थापित किया गया। इसका मुख्य काम अभियान के दौरान प्लान्कटन और दूसरे जन्तुओं का अध्ययन करना था।

अन्तर्राष्ट्रीय उपलब्धियां

अन्तर्राष्ट्रीय अभियान में 20 देशों में 18 अनुसंधान पोतों और वैज्ञानिकों ने जन्तु प्लान्कटनों के 2000 से भी अधिक नमूने इकट्ठे करके कोचीन केन्द्र में उनका अध्ययन किया। इन अध्ययनों के परिणाम के रूप में बहुत से शोधपत्र और दस एटलस प्रकाशित किए गए। इसी अभियान के अंतर्गत हिन्द महासागर की लहरों, धाराओं आदि अनेक विषयों का अध्ययन किया गया। इसी अभियान में राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान सस्थान, गोवा और अन्तर्राष्ट्रीय मौसम विज्ञान केन्द्र, बम्बई की स्थापना की गई। कुछ दिनों बाद इस केन्द्र को पूना ले जाया गया जहां महासागर की मानसूनी हवाओं का महत्वपूर्ण अध्ययन किया गया।

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान का योगदान

गोवा में स्थापित राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान का समुद्र विज्ञान के अध्ययन में महान योगदान रहा है। यह संस्थान सागर विज्ञान के भौतिक, रासायनिक, जैविक, भूगर्भीय पहलुओं का अध्ययन करता

रहा है।

इस संस्थान के विकास तथा अनुसंधान कार्य विज्ञान के कई पहलुओं से संबंधित रहे हैं। इस संस्थान ने बम्बई हाई से शहर तक 160 किलोमीटर लम्बी पाइपलाइन बिछाने के लिए सर्वेक्षण कार्य किया। इस संस्थान ने महाद्वीपीय शेल्फ के भागों में खनिज पदार्थ भण्डारों का भी पता लगाने में काफी कार्य किया है। सागर के अनेक तटीय विकास कार्यक्रम बड़े महत्व के रहे हैं। इन कार्यक्रमों का लाभ गुजरात, महाराष्ट्र, गोवा, दमन और ड्यू, कर्नाटक, केरल तथा आन्ध्र प्रदेश राज्यों को हुआ है।
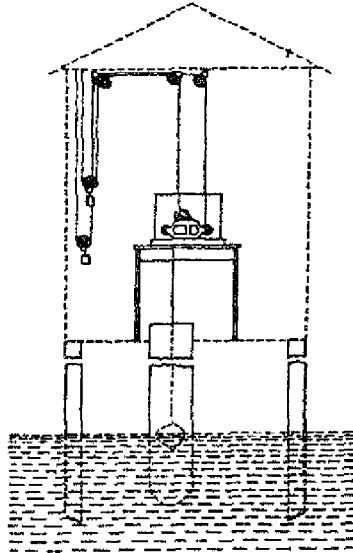
चित्र 16.1 : टाइड गेज

इस संस्थान ने समुद्री कटाव के संबंध में अनेक अनुसंधान कार्य किए हैं। गोवा संस्थान ने सागर विज्ञान संबंधी अनेक यंत्रों और उपकरणों का विकास किया है। इन उपकरणों में टाइड गेज़, वेव रिकार्डर, बैथीथर्मोग्राफ, गहराई मापक यंत्र, सेडिमेन्टेशन बैलेन्स, इकोसाउन्डर आदि मुख्य हैं। चित्र 16.1 में एक टाइड गेज़ दिखाया गया है।

महासागर विकास विभाग

संसार में सागर विज्ञान के महत्व को ध्यान में रखते हुए सन् 1981 में भारत सरकार ने महासागर विकास विभाग (Department of Ocean Developement) की स्थापना की। इस विभाग का मुख्य कार्य देश के आस-पास के सागरों में जैव सम्पदा और खनिज सम्पदा का पता लगाना है। यह विभाग देश में सागर विज्ञान से संबंधित वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान उपलब्ध करा रहा है।

पिछले 20 वर्षों की अवधि में इस विभाग ने सागर अनुसंधान के क्षेत्र में बहुत बड़ा योगदान दिया है। इसी की देख-रेख में अब तक 8 दल अन्टार्कटिका महाद्वीप में जा चुके हैं। वहां वैज्ञानिकों ने अनेक अध्ययन किए हैं। आज अन्टार्कटिका क्षेत्र में हमारा एक स्थायी केन्द्र है।

महासागर विभाग की देखरेख में हिन्द महासागर से बहुधात्विक पिण्डिकाएं प्राप्त की जा चुकी हैं। महासागर विकास विभाग के अन्तर्गत देश में अनेक योजनाएं चलाई जा रही हैं। महासागरों से संबंधित हमारे सामने अनेक चुनौतियां हैं जिनका मुकाबला हमारे वैज्ञानिक कर रहे हैं।

भारत के अनुसंधान पोत

गवेषणी, सागर कन्या और सागर संपदा हमारे देश के जाने-माने अनुसंधान जलयान हैं। गवेषणी पोत सन् 1975 में भारत ने खरीदा था। इस जलयान पर सन् 1976 में अनुसंधान कार्य आरम्भ किए गए। अब तक उत्तरी हिन्द महासागर के बहुत से रहस्यों को जानने के लिए इस पर बहुत से अनुसंधान कार्य किए जा चुके हैं। चित्र 16.2 मे गवेषणी पोत दिखाया गया है। यह पोत हर साल कई हजार स्थलों का परीक्षण करता है।

गवेषणी ने अपने अनुसंधानों के आधार पर हिन्द महासागर में कई ऐसे स्थानों का पता लगाया है जो मछलियों के भंडार हैं। सन् 1981 में इस जलयान की सहायता से समुद्र की तली में बहुधात्विक
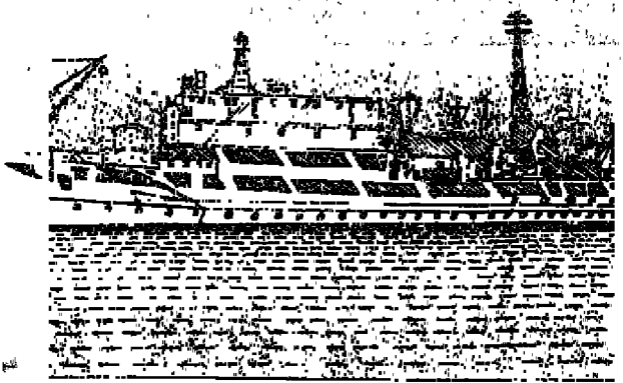
चित्र 16.2 : भारत का अनुसंधान जलयान गवेषणी

का पता लगाया गया। इस पोत द्वारा तेल प्रदूषण के
ध्ययन किए गए हैं।

ी द्वारा मानसून संबंधी बहुत से अध्ययन किए गए
हाई तथा गुजरात के तटीय क्षेत्रों में तेल के विषय
प्त की गई है। इस यान की सहायता से बहुत से लो
के विषय में प्रशिक्षण दिया जा चुका है। श्रीलंका
बहुत से क्षेत्रों का अध्ययन भी इस पोत के द्वारा कि

ी पोत वातानुकूलित है और इसमें 19 वैज्ञानिकों और
चारियों की रहने की जगह है। इसकी लम्बाई 68.3 मीट
मीटर और गहराई 4.1 मीटर है। इसका भार 1900
समें काम करने के लिए चार प्रयोगशालाएं हैं।

कन्या हमारा दूसरा अनुसंधान पोत है। यह सन् 19
या गया था। यह वातानुकूलित यान 100.34 मीटर लम
र चौड़ा और 9.8 मीटर गहरा है। इसमें 24 वैज्ञानि
और 8 तकनीशियन रह सकते हैं। इस पर 13 प्रयोगशा
कों पर स्थित हैं। सागर कन्या भौतिकी, भूविज्ञान, रसाय
सम विज्ञान आदि विषयों के अध्ययन में बहुत उपयो
है।

सागर कन्या मे 3 कम्प्यूटर प्रणालिया है जो आकडो का विश्लेषण करती हैं। इस यान की सहायता से ज्वारों को समझने में बड़ी मदद मिली है। अब तक सागर कन्या 100 से भी अधिक यात्राएं कर चुका है। इसे कई अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों में हिस्सेदार बनाया गया। इससे बहुत महत्वपूर्ण आंकड़े प्राप्त हुए।

सागर सम्पदा हमारा तीसरा अनुसंधान जलयान है। इसे सन् 1984 में डैनमार्क से खरीदा गया था। यह एक ऐसा अनुसंधान पोत है जिसमें सभी आधुनिक यन्त्र लगे हुए हैं। इस यान पर हैलीकॉप्टर उतर सकते हैं। इसका मूल्य लगभग 7 करोड़ रुपये था। इसकी लम्बाई 71.5 मीटर, चौड़ाई 16.4 मीटर है। इसका भार लगभग 800 टन है। इस यान में 50 से 100 टन तक मछलियां इसके प्रशीतक कक्षों में परिरक्षित की जा सकती हैं।

अनुसंधान कार्यों के लिए भारत किराए पर बहुत से जलयान लेता रहा है। सन् 1989 में बहुधात्विक पिंडों की खोज के लिए डी. एस. वी. नन्द किराए पर लिया गया।

हिन्द महासागर से बहुधात्विक पिंडों की प्राप्ति

वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चला है कि हिन्द महासागर की तली में अनेक बहुधात्विक पिंड बिखरे पड़े हैं। सन् 1981 में गवेषणी यान द्वारा ऐसे बहुत से पिंड प्राप्त किए गए। इन पिंडों में 15.5 प्रतिशत मैगनीज़ और 13.7 प्रतिशत लोहा पाया गया है।

हमारे पास इन पिंडिकाओं को प्राप्त करने के लिए देश में बने बहुत से उपकरण जैसे ड्रेज, बूमरेंग आदि उपलब्ध हैं। इन बहुधात्विक पिंडों को प्राप्त करके इनका अध्ययन जमशेदपुर, भुवनेश्वर, उदयपुर आदि नगरों में किया जा रहा है।

भारतीय अन्टार्कटिका अभियान

अन्टार्कटिका एक बर्फीला दुर्गम प्रदेश है। इस महाद्वीप पर आज सारे संसार की आंखें लगी हुई हैं। यहां पर खाद्य, पैट्रोलियम, कोयला आदि अनेक चीजों के विशाल भंडार हैं। सारे संसार के अनेक देशों

के दल इस प्रदेश में जा चुके हैं। हमारे देश के भी एक दर्जन से अधिक अभियान दल अन्टार्कटिका जा चुके हैं।

हमारे देश का पहला अभियान दल 6 दिसम्बर सन् 1981 को अन्टार्कटिका गया था। भारत अन्टार्कटिका सन्धि का एक सदस्य देश है। अब तक हमारे देश के कई हजार वैज्ञानिक सेवाओं के विशेषज्ञ इस प्रदेश के जीव-जन्तुओं और खनिजों का अध्ययन कर चुके हैं। अन्टार्कटिक देश में विभिन्न देशों के 45 से भी अधिक केन्द्र हैं।

हमारा महासागर विभाग इस प्रदेश से संबंधित अनुसंधानों के लिए, जो पर्यावरण, खनिज सम्पदा, जीव सम्पदा आदि से संबंधित है, योजनाएं बना रहा है।

सागर की तली से खनन संबंधी अनेक योजनाओं को प्रयोगात्मक रूप दिया जा रहा है। हमारे अनुसंधान पोत जोरशोरों से काम कर रहे हैं। अण्डमान तथा निकोबार द्वीपसमूह में झींगा और जलकृषि पर कार्य किए जा रहे हैं।

सागर प्रदूषण और उसका अध्ययन तथा रोकथाम, धातु निष्कासन, मछुआरों की सहायता आदि से संबंधित अनेक कार्य किए जा रहे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ

1. ओसन्स, ब्रामवैल, मार्टिन, वाट्स, 1984
2. सीज एण्ड ओसन्स, लैम्बर्ट, डेविड, मैककोनेल फैक्ट्स आन फाइल, 1985
3. दुर्गम प्रदेश अन्टार्कटिका, राजीव गर्ग, भागीरथ सेवा संस्थान, गाजियाबाद, 1991
4. डोनाल्ड जी, ग्रोव्स तथा एल. एम. हन्ट, ओसन वर्ल्ड एनसाइक्लोपीडिया, मैक ग्रॉ हिल, 1980
5. कार्स्स वेसले, द ओसन्स अवर लास्ट रिसोर्स, रेन्डम हाउस, 1981
6. द न्यू बुक ऑफ पापुलर साइंस, खंड-2, ग्रेलियर इनकोरपोरेटेड यू. एस. ए.
7. साइन्स एनसाइक्लोपीडिया रेनट्री, पब्लिशर्स, लन्दन
8. रिले जे. पी. तथा स्कीरोव जी, कैमीकल ओसनोग्राफी, खंड-2, एकेडेमिक प्रेस, लन्दन
9. द वर्ल्ड बुक एनसाइक्लोपीडिया, वर्ल्ड बुक इनकोरपोरेटेड, लन्दन
10. एनसाइक्लोपीडिया अमेरिका ग्रोलियर इनकोरपोरेटेड डेनबरी
11. हेन्ड बुक ऑफ ओसनोग्राफी
12. हिन्दमहासागर, श्यामसुन्दर शर्मा तथा कुसुमाकर सुकुल, भागीरथ सेवा संस्थान, गाजियाबाद

पारिभाषिक शब्दावली

अकार्बनिक	Inorganic	गुरुत्वाकर्षण	Gravitation
अवसाद	Sediments	गोताखोर	Diver
अन्तरिक्ष	Space	घातक	Hazardous
अन्वेषण	Exploration	चमक	Glare
अन्तर्राष्ट्रीय	International	जलचक्र	Water Cycle
अपतटीय	Off Shore	जलयान	Ship
अन्टार्कटिका	Antarctica	जलवायु	Climate
अवशोषण	Absorption	जीवमंडल	Biosphere
अयस्क	Ore	जीवाणु	Bacteria
अपशिष्ट	Waste	ज्वार	Tide
अवयव	Component	झील	Lake
अनुसंधान	Research	तकनीकी	Technology
आसवन	Distillation	तलहटी	Bottom
ईंधन	Fuel	तापमान	Temperature
उत्पत्ति	Origin	तेल	Oil
उपकरण	Apparatus	दक्षिणी ध्रुव	South Pole
उपग्रह	Satellite	धात्विक पिंडिकाएँ	Metallic Nodules
ऊर्जा	Energy		
कपड़े	Clothing	धातु	Metal
कार्बनिक	Organic	धारा	Current
कोयला	Coal	धुआँ	Smoke
खनिज	Mineral	धूल	Dust
खाद्य शृंखला	Food Chain	नमक	Common Salt

नदी	River
नौका	Boat
नाभिकीय	Nuclear
नियंत्रण	Control
निष्कासन	Extraction
परमाणु ऊर्जा	Atomic Energy
पराबैंगनी	Ultraviolet
पर्यावरण	Environment
पेयजल	Drinking Water
प्रकाश संश्लेषण	Photosynthesis
प्रणाली	System
बाढ़	Flood
बंदरगाह	Harbour
भूपर्पटी	Earth Crust
भूमंडल	Globe
भूमि	Lad
भू-भौतिकी	Geophysical
भूमिगत	Underground
महाद्वीप	Continent
महासागर	Ocean
मिट्टी	Soil
मोती	Pearl
मोटरवाहन	Automobile
मौसम	Weather
यातायात	Transportation
यंत्र	Instrument
रॉस सागर	Ross Sea
रेडियोधर्मिता	Radioactivity
वन्यजीव	Wild Life
बर्फ	Ice
लहर	Wave
लोहा	Iron
बर्फीली हवाएं	Blizzard
विलायक	Solvent
वातावरण	Environment
वाष्पीकरण	Evaporation
वायुमंडल	Atmosphere
विखंडन	Fission
संतुलन	Balance
संधि	Treaty
सागर	Sea
सागर विशेषज्ञ	Oceanographer
सीसा	Lead
सौर ऊर्जा	Solar Energy
सम्पदा	Resources
संवेदक	Sensor
संलयन	Fusion
स्तनपायी	Mammal
हिमखंड	Iceberg
हिमीकरण	Freezing
क्षेत्र	Region